Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यरथी

नीरव एम.ए.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय डा. रामस्वरूप आर्य को
सस्नेह
नीरज
15.7.78

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यरथी

युगपुरुष
भगवान महावीर के
जीवन
एवं
जीवन-दर्शन
पर
आधारित
एक प्रबन्ध-काव्य

●

'नीरव' एम. ए.

Central Library
185396
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
097
185396

प्रकाशक
राज बुक डिपो, बरेली

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
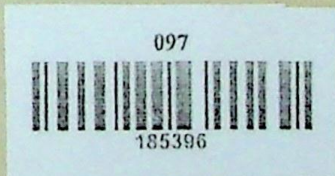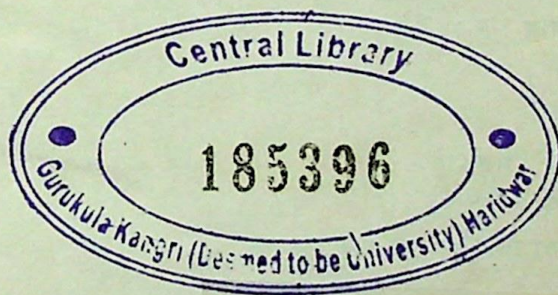
R.P.S
097
ARY-S

© सर्वाधिकार लेखकाधीन

●

प्रथम संस्करण—१९७८

●

मूल्य {सजिल्द—**चौदह रुपये**
{अजिल्द—**बारह रुपये**

●

प्रकाशक :

राज बुक डिपो,
२९, सुभाष मार्केट, बरेली।
[दूरभाष : २७७२]

●

लेखक :

'नीरव', एम. ए.
गोपाल भवन
खैरुल्ला गली, बरेली।

●

मुद्रक :

जैनसंस प्रिन्टर्स
४/४५ तकिया वजीरशाह
सेठगली, आगरा।
[दूरभाष : ६४०७५]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यरथी

तुम सकल जीव, जीवन-पथ के
अविराम तिमिर-हर अपर भानु
हे सत्यरथी ! निर्मल विवेक—
अज्ञान-द्वेष-घन वन—कृसानु ।

'नीरव'

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक की कुछ अन्य कृतियाँ

काव्य

१. प्रलापिनी
२. पथशूल
३. दीपदान
४. किरणवधू
५. तार-स्वर

खण्डकाव्य

१. उत्सर्ग
२. धरती का लोभ

बालोपयोगी

१. मुन्नु पप्पू
२. पढ़ो कहानी
३. अच्छा कौन
४. प्यारे और दुलारे बालक
५. बापू की वाणी
६. आजू राजू
७. बोलते पशु

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. ... स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट—
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

दो शब्द

'सत्यरथी' एक काव्यकृति है। जीव, जगत तथा धर्म से सम्बन्धित जो अंश इस रचना में समाविष्ट हैं वे महापुरुष वर्द्धमान के चिन्तन की समग्रता को हृदयंगम करने के लिए अनिवार्य हैं। इस पुस्तक की विषय-सामग्री का चयन करने में मुझे कई वर्ष लगे। मैं उन सभी विद्वान लेखकों, विचारकों तथा प्रवचनकर्ताओं का कृतज्ञ हूँ जिनके विषय की उपादेयता को स्वीकार कर मैंने उनके विचारों को ग्रहण किया। मैं डॉ. कुन्दनलाल जैन का आभारी हूँ जिनके परामर्श से यह काव्य-रचना सरल तथा तात्विक हो सकी।

खैरुल्ला गली,
बरेली।

—'नीरव'

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

'सत्यरथी' में इतिवृत्त

पचीस शतक से कुछ अधिक समय व्यतीत हो चुका, संस्कृतियों और धार्मिक चिन्तनों की शिरोमणि भारत-भूमि के एक अंचल में एक महापुरुष का जन्म हुआ था। उस महापुरुष ने तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक मान्यताओं को साहसपूर्वक विषम और अस्वाभाविक कहा। उसने अपने जीवन के समस्त सुखों तथा राजसत्ता के ऐश्वर्यों का तिरस्कार कर अपने जीवन को किसी ऐसे सत्य की खोज के लिए अर्पित किया जो शान्ति एवं सुख का शाश्वत आधार हो। उस युग में कर्मकाण्ड, यज्ञ, पशुबलि, वर्ण-व्यवस्था सामाजिक वर्ग भेद-भाव के कारण समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग उपेक्षित था। कठोर तप तथा अनेक प्राकृतिक संकटों और उपसर्गों में अडिग रह कर उसने सत्य, ज्ञान का अर्जन किया और यह स्थापना की कि मानव समाज एक है। उसमें सबका समान अधिकार है। सबको विकास का समान अवसर है। जीव और जगत में प्राकृतिक रचना प्रक्रिया के परिणाम हैं। कोई उनका सृष्टा अथवा संहर्ता नहीं है। प्रत्येक जीव स्वयं में एक इकाई है। कर्मों के उचित पालन के द्वारा जीव का विकास होता है और कर्मों के बन्धन से मुक्ति के द्वारा जीव मोक्ष की स्थिति में आता है। इस महापुरुष ने ईश्वरीय सत्ता के भय को समर्पित व्यक्ति को भाग्यवाद के क्लोरोफार्म से मुक्त करने के निमित्त आत्मज्ञान और कर्म-प्रधानता के शीत पवन स्पर्श प्रदान किये। वह ऐतिहासिक महापुरुष भगवान महावीर थे।

प्राचीन भारत में लिच्छवि राजाओं के कुछ गणतन्त्र लोकविख्यात थे। बिहार के वैशाली क्षेत्र में कभी कुण्डपुर अथवा कुण्डनपुर एक प्रसिद्ध नगर था। यहाँ के इतिहास प्रसिद्ध राजा सिद्धार्थ थे। सिद्धार्थ का विवाह विदेह स्थित एक अन्य गणराज्य के प्रमुख चेटक की पुत्री त्रिशला से हुआ। त्रिशला नितान्त सौम्य स्वभाव वाली शशिवदना परम सुन्दरी थी। उसके पिता ने अतएव उसका एक नाम प्रियकरणी भी रखा था। महाराज सिद्धार्थ अपनी इस नव-परिणीता पत्नी त्रिशला के साथ अपने एक भव्य प्रासाद नन्द्यावर्त में सुख से रहते थे। त्रिशला ने एक निशा के अन्तिम प्रहर में एक विचित्र स्वप्न देखा और प्रातः होते ही अपने पति सिद्धार्थ से वह स्वप्न कहा। सिद्धार्थ ज्योतिष विद्या में निष्णात थे उन्होंने त्रिशला को स्वप्न का यह फल बताया कि उसके

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ में जो शिशु है वह निर्भीक व लोक-कल्याणकारी होगा और उसका यश विश्व में व्याप्त हो जायगा। आचाराणां विघातेन, कुदृष्टीनांच सम्पदाम् धर्मग्लानिं परिप्राप्तमुच्छ्रयन्ते जिनोत्तमाः। त्रिशला के गर्भ में जो पुत्र उत्पन्न हुआ उसके जन्म के साथ ही राज्य में विपुल धन-धान्य की वृद्धि हुई। नृप ने उसका नाम वर्द्धमान रखा। शैशवावस्था से ही वर्द्धमान के साहस और उसकी निर्भीकता की ख्याति व्यापक होने लगी। उसको महावीर और सन्मति भी कहा गया। वर्द्धमान का व्यक्तित्व प्रांजल होने लगा और उसमें यौवन के लक्षण उद्दीप्त होने लगे तो माता-पिता ने उसके विवाह के एक प्रस्ताव पर विचार किया और महावीर से जब उसकी सम्मति माँगी गयी तो महावीर ने विवाह के लिए स्वीकृति नहीं दी। सिद्धार्थ महावीर के चरित्र में विकसित होते हुए निर्वेद और निरासंग के विषय में चिन्तित होते रहे। अनेक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रबोधन वर्द्धमान को राजसुख भोगने की ओर आकृष्ट करने में असमर्थ रहे। जब वर्द्धमान तीस वर्ष के थे उन्होंने प्रवज्या की घोषणा की। प्रवज्या की तिथि पर अपार नर-नारी समूह ने उन्हें आश्चर्य, अवसाद और करुणा से अभिभूत होकर विदा किया। वर्द्धमान ने असाध्य प्राकृतिक संकटों, परीक्षाओं और प्रलोभनों तथा आपत्तियों में अडिग रह कर तप किया और अन्ततः उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। केवलज्ञान की प्राप्ति के उपरान्त वर्द्धमान ने मंगल-विहार किया। सर्वप्रथम राजगृह के विपुलाचल पर्वत पर उन्होंने ज्ञानोपदेश किया। समवशरण की रचना हुई, उनके उपदेश आबालवृद्धवनिता तथा प्रत्येक जीवधारी के लिए सुलभ हुए। इन उपदेशों से जनता को धर्म व सत्य एवं यथार्थ स्वरूप का ज्ञान हुआ। अनेक राजाओं ने समवशरण में आकर हिंसा और कुकृत्यों से घृणा सीखी।

वर्द्धमान द्वारा प्रचारित तत्वज्ञान के दो मूल तत्व हैं जीव और अजीव। सुखेच्छा और दुख से विरति जीव का स्वभाव है। उनका कथन था कि धर्म ही उत्कृष्ट मंगल है। जिसका मन धर्मरत है उसका देवता भी अभिनन्दन करते हैं :

धम्मो मंगलं मुक्किट्ठं अहिंसा संजमों तवो ॥
देवा वितं नन्मंसंति जस्स धम्मे सयामणे ॥

अहिंसा अपरिग्रह और स्याद्वाद महावीर दर्शन के सर्वोपरि सिद्धान्त हैं। महावीर ने कर्म को गहन तात्विक दृष्टि से देख कर यह स्थापित किया कि कर्म ही सांसारिक रति का कारण है, कर्म से मुक्ति ही मोक्ष है। यह मोक्ष नर-नारी स्पर्श्यास्पर्श सभी के लिए सुलभ है। कर्म के मूल तत्व पर आधारित उन्होंने गृहस्थ के लिए ऐसी आचार संहिता प्रस्तुत की जिसका पालन करके कोई भी जीव पुनः अजीव की स्थिति में नहीं आता। इतिहास प्रसिद्ध मल्लों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की नगरी पावानगरी में बहत्तर वर्ष की आयु पूर्ण करने के पश्चात महावीर ने निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान महावीर के उपदेश और उनके आचरण की आज के भयत्रस्त उपेक्षित तथा युद्ध की विभीषिका से सशंकित मानव को अत्यावश्यकता है। मानव त्राण के लिए उनका दर्शन और उनकी विचारधारा का समाज आज के युग की समस्त विषमताओं का निराकरण करने में समर्थ है।

'सत्यरथी' में कल्पना

'तीर्थंकर की जननी एक ही पुत्र को जन्म देती है' और 'वर्द्धमान का अविवाहित रहना' ये दो प्रधान स्वर हैं इस काव्य के इतिवृत्त के। कवि ने विवाद की स्थिति को अपसृत कर निश्चय के साथ ये दोनों स्थितियाँ स्वीकार कर ली हैं और अपने प्रबन्ध को विविध कल्पनाओं से विभूषित किया है। सम्पूर्ण प्रबन्ध में व्याप्त मूल कल्पना ही स्वयं में रोचक और प्रभावी है।

एक यायावर अथवा पथिक अपने सन्मित्र प्रेरक के साथ भारत परिभ्रमण के लिए निकला। यायावर को शान्ति और सुख की आकांक्षा थी जिसकी खोज के लिए उसने हिमालय की उपत्यकाओं से लेकर दक्षिण में कावेरी नदी तक समस्त भारत का अवलोकन किया। अन्त में प्रेरक ने यायावर का रथ वैशाली की पुण्य भू में लाकर खड़ा कर दिया। उस भूमि के प्रभाव से यायावर के मन को कुछ सन्तोष हुआ और प्रेरक ने वैशाली की महिमा से प्रारम्भ कर भगवान महावीर के विशद् जीवन और गहन चिन्तन की समस्त कथा उसे सुनाई और धर्म तथा कर्म के प्रशस्त आयामों से उसे अवगत कराया। आत्मविसुध यायावर ने समस्त वर्णन सुना और ऐसा अनुभव किया कि वास्तविक सुख और शान्ति की उपलब्धि उसे हो गयी। उसने प्रेरक से निवेदन किया कि रथ सागर में विसर्जित कर दो और अन्त में इस भूमि से अन्यत्र कहीं नहीं जाना चाहता। 'सत्यरथी' के कवि ने काव्य के अन्त में इस कल्पना की प्रतीकात्मकता को स्पष्ट किया है। इसके अतिरिक्त वैशाली के महान प्राचीन गौरव, त्रिशला के शालीन सौन्दर्य, वर्द्धमान की प्रवज्या यात्रा, वन तथा वन में वर्द्धमान की तपस्या के अत्यन्त कवित्वपूर्ण स्थल इस काव्य में कल्पना से प्रस्तुत किये गये हैं। महावीर चिन्तन को दर्शन की कठिनता से निकाल कर उसके मूल तत्वों का काव्यमय विवेचन किया गया है जिसमें यत्र-तत्र यायावर के प्रश्न और प्रेरक के उद्बोधन वाक्य-विषय की गरिमा को सरसता से जोड़े रहते हैं। अन्त में आज के सन्दर्भ में महावीर चिन्तन की आवश्यकता बड़ी भावुकता और यथार्थता के साथ प्रतिपादित की गयी है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सत्यरथी' का कवित्व

'सत्यरथी' का कवित्व मनोरम है। उसका कवि विगत चालीस वर्ष से काव्य सृजन कर रहा है, स्वान्तः सुखाय, किसी लोभ से नहीं, इसी हेतु वह साहित्य का मौन एवं एकान्त उपासक रहा है। स्पष्ट ही है कि उस पर छायावादी काव्य-रचना शैली का प्रभाव है क्योंकि उसके काव्य के सृजन का प्रारम्भ उस काल में हुआ जब छायावादी काव्य की प्रौढ़ावस्था का युग था। सत्यरथी में वही कल्पना का माधुर्य, वही अमूर्त विधान, वही मानवीकरण की प्रवृत्ति, वही भाषा-सौष्ठव का अनुराग और रूप-वर्णन के प्रति वही उद्दाम-पिपासा। उसने मानव-मनोवेगों और प्राकृतिक व्यापारों को एक सजीव रूप में देखा है। जो मानव की भाँति अपनी भावनाओं के प्रभाव में गतिशील हैं और मानव के समान ही अन्तर्भावनाओं से उद्वेलित रहते हैं। 'सत्यरथी' के कुछ प्रारम्भिक सर्गों में इसी छायावादी अभिव्यक्ति पद्धति के दर्शन होते हैं और उनके समस्त वर्णन उसी अभिव्यक्ति की सरसता से आप्लावित हैं। जहाँ भी उसकी कल्पना को उन्मुक्त होकर विहार करने का अवसर मिला है, कवि ने समस्त परिवेश को प्राणमय देखा है, यह स्थिति उसकी आनुभूतिक तन्मयता का प्रमाण है। वह काव्य के विषय को कुशलता से सुयोजित करने की कला का मर्मज्ञ है और 'सत्यरथी' के समस्त व्यापारों और घटनाक्रमों को सहृदयता के साथ सम्बद्ध करने में उसने काव्योचित सफलता प्राप्त की है। इस काव्य के लिए उसने जिस विषयवस्तु को अपनी कल्पना के आयामों में बाँधा है वह अत्यधिक विस्तृत, बुद्धि सापेक्ष और वर्णन पटुता की आवश्यकता रखती है। कवि ने समस्त वस्तु-विधान को अत्यन्त संक्षिप्त और कलात्मक रूप में संजोया है। कहीं अपूर्णता अथवा असमर्थता का आभास नहीं मिलता। सत्यरथी का कवि शुद्ध, परिमार्जित और प्रांजल भाषा का पक्षपाती है। उसकी भाषा और वर्णन की सामर्थ्य विषय के उपयुक्त है। संस्कृत व्याकरण के आश्रय से वह अभीष्ट शब्दों के निर्माण में निष्णात है और उसके शब्द उसकी इच्छा का स्वाभाविक अनुगमन करते प्रतीत होते हैं। कुछ अध्येताओं को इस प्रबन्ध में नये शब्द प्राप्त होंगे जिन्हें अप्रचलित कहा जाना उचित न होगा क्योंकि काव्य में यदि नये शब्दों का प्रयोग नहीं होता तो भाषा रूढ़ बन जाती है और शब्दकोष सीमित रह जाता है। नवीन शब्दों को उनकी स्वाभाविक सामर्थ्य के साथ प्रयोग में लाना भाषा के विकास का उपक्रम सदा से चलता आ रहा है। महिमामय के अर्थ में 'वाश्कल' और अग्नि के समान सतेज तथा पावन के अर्थ में 'शुचिष्मत' शब्द काव्य की भाषा के विकास की ओर संकेत करते हैं। एकवचन के स्थान पर बहुवचन के प्रयोग की प्रवृत्ति इस काव्य की अपनी विशेषता है। ऐसे प्रयोगों में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्वन्यात्मकता विस्तृत हो गयी है। प्रकृति-वर्णन, छायावाद अभिव्यक्ति शैली की अपनी विशेषता है। 'सत्यरथी' में प्रकृति के अनेक मनोरम चित्र कवि ने परिस्थितियों के साथ संयुक्त किये हैं जो कहीं परिस्थितियों के परिचायक कहीं उद्दीपनों के रूप और कहीं शुद्ध आलम्बन की स्थिति में अंकित किये गये हैं। ये सभी वर्णन सरस और मर्मस्पर्शी हैं। इस भूमिका का पाठक इन कथनों की पुष्टि के लिए उत्सुक हो उठेगा। सर्ग दो की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं। कामोद्दीपन परिस्थितियों की सृष्टि के लिए किस प्रकार कवि ने वसन्त की अवतारणा की है:

उतरा दीप शिखायें रखता
कौन पलाशों की चोटी पर
किसने वन, उपवन, निर्जन में
छोड़े नव शोभाओं के शर।
× × ×
पवन परस पुलकित वल्लरियाँ
दृढ़ता का जैसे करतीं छल
वायु व्याज था, तरु उपस्थ से
परिरम्भों का मन था चंचल।

त्रिशला के सौन्दर्य का शालीन और मनोहर वर्णन करते हुए कवि ने कहा है:

छू जिसकी सौन्दर्य मधुरिमा
थी सुवर्ण धन चम्पा सरला
मधु किंजल्क कुसुम सब हारे
त्रिशला सी केवल थी त्रिशला।
× × ×
उसने गरिमा जातरूप की
रूप-जात गरिमा में ढाली
मृगमद ने घनसार कमल ने
गन्ध भरी उसकी केशाली।

सत्यरथी में अलंकार अपने स्वाभाविक रूप में प्राप्त होते हैं। कहीं भी ऐसा प्रतीत नहीं होता कि कवि ने उनको आमन्त्रण करने का कोई प्रयास किया हो। वे उसके वर्णन की मधुरता में स्वयं ही स्फूर्त हुए हैं। अनुप्रास, उपमा, रूपक, यमक, श्लेष, अतिशयोक्ति, विभावना, विशेषोक्ति उदाहरण—अर्थान्तर न्यास तथा रूपकातिशयोक्ति उसके प्रिय अलंकार हैं जिनकी उपस्थिति से वर्ण्य विषय अधिक स्पष्ट और सरस हो गया है। वर्द्धमान के तप में ग्रीष्म के उत्ताप और ज्वाला का वर्णन कवि ने रोचकता के साथ किया है। अतिशयोक्ति का एक कथन उद्धृत है—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिमट गये आयाम सरों के
वीचि-विलास तटों से छूटे
पिगला भू स्रोतों में आतप
छाया में भी प्रस्तर टूटे।
× × ×

अलंकारों के कुछ अन्य रोचक उदाहरण हैं :

नव हरीतिमा की बाहों में
ठहरा-ठहरा सा आमन्त्रण
हिला न देता जिसको ऐसा
रहा नहीं कोई संयम प्रण।
× × ×
होते होते हुआ समय से
जन समूह अनुयायी सारा
यथा भगीरथ के पीछे हो
लहराती गंगा की धारा।
× × ×
अश्रु नयन से वीणा से स्वर
अर्थ शब्द से, मणि विषधर से
भू से स्रोत, घटा से सुरधनु
निकले ज्यों प्रतिमा प्रस्तर से

कवि ने कुछ अलंकारों का संयोजन कुशलता के साथ, पात्र एवं परिस्थिति की गरिमा के अनुकूल किया है :

यथा—

अर्द्ध निमीलित दृग अधरों पर
यथा, पूर्व जन्मों की सुधियाँ।
× × ×
कभी देर तक रोने का माँ
समझ न पातीं कारण ऐसे
अनुमानों से सत्य जगत का
मिल न सका चिन्तक को जैसे।

वर्द्धमान द्वारा विवाह प्रस्ताव अस्वीकृत किये जाने के पश्चात राज्य परिवार और नगर नर-नारी को जो दुख हुआ वह तो कल्पना में ढालने का व्यापार है। जड़ पदार्थों और मानवेतर प्राणियों पर उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे 'सत्यरथी' के कवि ने गम्भीर करुणा में भिगोकर कितनी मार्मिकता से व्यक्त किया है :

यह परिणय की बात अपरिणत
मन न खिले उत्साह न सरसे
एक घटा जो एक दिशा से
उठी और बिखरी बिन बरसे
अन्तःपुर उद्यान-निकुंजों
के उल्लास-कुसुम मुरझाये
पावस-स्नात द्रुमों पर पढ़ने
'पी' 'पी' फिर न पपीहे आये।

सत्यरथी का प्रधान रस शान्त रस है किन्तु करुणा वात्सल्य और वीभत्स के कतिपय चित्र भी विद्यमान हैं।

सत्यरथी और आधुनिक युग-बोध

आधुनिक युग समस्याओं का युग है। व्यक्ति और समाज के सम्मुख बहु-मुखी समस्याएँ विद्यमान हैं। भगवान महावीर के युग में जो विषमताएँ थीं वे आज भी दृष्टिगोचर हैं। भौतिकवादी दृष्टिकोण तथा आर्थिक विकास की अत्यधिक उग्र प्रतिस्पर्धाओं ने आज के मानव को अशान्त, चिन्ताकुल तथा स्वार्थी बना दिया है। आज वह युद्ध की विभीषिका से आतंकित है। उसके समाज में भेद-भाव तथा आर्थिक विषमताओं की विपुलता है। विश्व मानव को आज इन अनेक चिन्ताओं से यदि त्राण कहीं भी प्राप्त हो सकता है तो महावीर की शिक्षाओं में प्राप्त हो सकता है। महावीर ने जिस अहिंसा और अपरिग्रह पर बल दिया था वह अहिंसा और अपरिग्रह उपदेश मात्र ही नहीं है, वह एक जीवन-पद्धति और आचरण की शैली है। उनके चिन्तन में मनुष्य को परमात्मा बना देने की क्षमता विद्यमान है। प्रश्न केवल उसे चिन्तन जीवन और सामाजिक व्यवहार में उतारने का है। उन्होंने व्यक्ति को चिन्तन, व्यवहार और समस्याओं तथा स्थितियों पर उदार दृष्टिकोण से विचार करने का मार्ग दिया। वे आग्रह की स्थिति को अहंकार और विनाश की स्थिति स्वीकार करते थे। तीर्थंकर की वाणी को महात्मा गाँधी ने आचरण का मूल स्वीकार किया और विश्व के मानव को अहिंसा और सम्यक् चरित्र का बोध प्रदान किया। भगवान महावीर ने अपने युग के समस्त ज्वलन्त प्रश्नों पर गम्भीरता से विचार किया और उनके उचित समाधान प्रस्तुत किये। 'आवश्य-कताओं को कम करना और वस्तुओं के संचय को सीमित रखना' महावीर का यह सिद्धान्त आज के अभावत्रस्त मानव को सर्वाधिक मंगलकारी है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यरथी में आधुनिक युगबोध का स्वरूप स्पष्ट है। सत्यरथी ने महा-पुरुष वर्द्धमान के सामाजिक चिन्तन का स्वरूप अधिक उभार कर व्यक्त किया है। आज के मानव की कोई ऐसी समस्या नहीं जिसका वर्द्धमान के चिन्तन में समाधान उपलब्ध न हो। सत्यरथी ने कुछ ज्वलन्त समस्याएँ सामने रखी हैं।

विवाह की समस्या उनमें से एक है। क्या विवाह अनिवार्य है? यदि विवाह व्यक्ति के किसी महान लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक हो तो उसका तिरस्कार न कोई अनौचित्य है और न अपराध। युद्ध की समस्या आज की राजनीति की गम्भीर समस्या है। क्या युद्ध अनिवार्य है? नहीं, अनिवार्य नहीं। युद्ध के परि-णाम भयंकर, विनाशकारी और दूरगामी होते हैं किसी भी मूल्य पर युद्ध की परिस्थिति को जन्म नहीं देना चाहिए। सामाजिक भेद-भाव की समस्या आज के मानव की सबसे अधिक अपमानजनक समस्या है। कोई कारण नहीं कि कोई धनी, कोई निर्धन, कोई उच्च और कोई नीच रहे। मानवमात्र समान हैं अतः समाज में सभी को अपनी प्रगति तथा उपलब्धियों के सुख का अवसर प्राप्त होना चाहिए। क्या धर्म सामाजिक जीवन का आधार है? यदि है तो धार्मिक तथा सामाजिक पक्षपात और विषमताएँ क्यों उत्पन्न होती हैं।

धर्म एक सामाजिक व्यवस्था है और व्यवस्था का नियन्त्रण भी। धर्म के नाम पर एक वर्ग सुख का और अन्य वर्ग दुख तथा उपेक्षा का भागी बने यह अन्याय है। धार्मिक चिन्तन गतिशील स्थिति है उसमें तर्कहीन जड़ता का कोई स्थान नहीं।

सत्यरथी का सन्देश है जागृत युगबोध और सदाचार। वह औदार्य साम्य और वर्गहीन समाज का उद्घोष करता है। आज की युवा पीढ़ी को उसने प्रबुद्ध किया है और ऐसी समस्याएँ तथा स्थितियाँ अंकित की हैं जो उस पीढ़ी को कर्तव्य की दिशा देती हैं। सत्यरथी के कवि ने इस युग की समस्याओं का उल्लेख करते हुए भगवान महावीर का बड़ी भावुकता और करुणा के साथ आवाहन किया है।

सत्यरथी प्रत्येक व्यक्ति की पुस्तक है।

३५ जे १३
रामपुरबाग
महावीर जयन्ती
२-४-७७

—डॉ. कुन्दनलाल जैन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग १

[१]

सुर-वन्दित नगपति-अंचल की
घन शोभा श्री मृदु हरियाली
चित्र-विहग-वृन्दों की संसृति
जन मन हर अभिराम द्रुमाली।

[२]

यौवन की अनुपम आभायें
आभाओं का यौवन छलका
चरण-चरण हेला पर चढ़ती
नव वय सुन्दरियों की अलका।

[३]

जिज्ञासाओं की सहस्रदल—
कली, जहाँ संतृप्ति फली थी
जहाँ जीव-जग-संशय सुलझे
चिन्ताओं की रात ढली थी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

वह हिमवान जहाँ से छूटीं
प्रथम रश्मियाँ ज्ञानोदय की
और मिली भारत की भू को—
सम्पद्, संस्कृति सिद्धि अजय की ।

[५]

विन्ध्याचल, विन्ध्याचल के वन
वन-विभूति के व्यंग चितेरे
उतर रहे होंगे सुधियों में
उनके रंजित साँझ सबेरे ।

[६]

जन्मभूमि-पूजा की प्रतिभू
रणस्थली वह हल्दीघाटी
कण-कण ज्वालाओं से खेली
चित्रित अखिल शौर्य की पाटी ।

[७]

सिन्धु, देवसरि, सूर्यसुता या
महानदी, कृष्णा, कावेरी
सब के तट-पलकों पर अंकित—
संस्कृति, संस्कृतियों की ढेरी ।

[८]

घटम् मृदंगम् की समगति पर
मचली मधुर नृत्य-वेलायें
अब तक जो लहरों में बाँधे
सुख-समृद्धियों की गाथायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

इतिहासों का वह युग जिसके
साथ चलीं उत्ताल तरंगें
साधे हैं अपने गीतों में
कितनी ही जीवन्त उमंगें।

[१०]

पर्वत हो पृथिवी या जल हो
जीवन हो या जीवन-धारा
प्रवहमान जड़ में चेतन में
ज्ञान, कर्म, संकल्प हमारा।

[११]

उत्तर से दक्षिण तक हम तुम
चले और बढ़ते ही आये
थके न पाँव न अलसाई गति
उत्साहों ने पंथ सजाये।

[१२]

देख रहे थे इस यात्रा में
यायावर ! हम जिसका सपना
उसी पुण्य भू के प्रान्तर में
आ पहुँचा है अब रथ अपना।

[१३]

बनो न चंचल, पवन-वेग के—
पंखों, पर क्यों झूल रहे हो
इसी धरा के आकर्षण की—
धारा में, अतिकाम बहे हो।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

देवभूमि वीरों की वसुधा
लिच्छिवियों की भू वैशाली
रही सदा जिसके दिवसों की—
प्रगति-कला के मुख पर लाली।

[१५]

इसके चिर अतीत-पृष्ठों पर
मुद्रित विपुल ज्ञान की वाणी
इसने दी आहत वसुधा के—
जन जीवन को, गति कल्याणी।

[१६]

वैशाली के संकेतों पर
किये रहे दृग अम्बर अवनी
वैशाली की धर्म-विमलता
सुख की राजसिद्धि की जननी।

[१७]

वैशाली ने चरण-तलों पर
रख देते तपते अंगारे
वैशाली ने जन-पूजा हित
नभ के कंचन कुसुम उतारे।

[१८]

किये लक्ष्य से कभी विलग दृग
सहज नहीं इसके वीरों ने
रोके नहीं प्रगति-पथ इसके
संशय भय के प्राचीरों ने।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६]

सजीं इसी के छायांचल में
युग की श्रेष्ठ राजसत्तायें,
इसने पौरुष के पानी की
देखीं हँसती पूत प्रभायें।

[२०]

विधु से हँसी सुमन से खेली
देखी नहीं अमा की पीड़ा
दी इसने निज कुल-वधुओं को
रूप-शिखा, समयोचित व्रीड़ा।

[२१]

गौरव था, अभिमान नहीं था
ममता के व्यवहार सदय में
बनता कब समीर का मधु कर—
पीड़ा, कली कुसुम किसलय में।

[२२]

धर्म-धनी, शासन-पद्धति के
सहज समर्थक सत्य-पुजारी
इस वसुधा के नृप मराल थे
जन-मानस - रुचि-वीचि - विहारी।

[२३]

झरते रत्न बरसती मणियाँ
माणिक मुक्ताओं के मेले
ये भूपति, भूपति-मूर्द्धामणि
मन चाहे वैभव से खेले।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

इनके न्याय-सिद्ध शासन में
कला समृद्ध, विवेक विमल था
हृदय हृदय अध्यात्म-सिद्धि की—
इच्छा का, अनुगत पल पल था।

[२५]

निरहम् इसके भूपतियों ने
सर्वोपरि जन मन को देखा
दिया इसी ने राज-विधा को
प्रजातंत्र का अभिमत लेखा।

[२६]

राजव्यवस्था की शुचिता का—
थी, आधार एक गणसत्ता
संथागारों के निर्णय पर
आश्रित थी नृप की कृतिमत्ता।

[२७]

अप्रमाद कर्त्तव्य-निष्ठ थे
शक्तिजयी नरपति-कुल सारे
साधे थे युग की प्रतिभा को
इनके मन के सबल सहारे।

[२८]

सरुचि धर्म - सम्मेलन - कृतमति
संयम-व्रती, नियम - अनुरागी
गुरुजन-भक्त, महत्वाकांक्षी
भद्र, उदार, विषय-विष-त्यागी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

पड़े नहीं ये पूर्व-प्रतिष्ठित—
विधि-निषेध की बाधाओं में
जन-व्यवहार-व्यवस्था की छवि
ढली इन्हीं की शालाओं में।

[३०]

अर्हन्तों की रक्षा में रत—
सतत, सुदृढ़ आश्रय-प्रदाता
कूटागार, चैत्य, पुष्करणी
कूप, प्रपा, ह्रद, वलभि-विधाता।

[३१]

मरु उद्यान बनाये रुचि से
हरित हुई सिकता की धरती
रही सफलता अपने कर से
हर उद्यम का अंचल भरती।

[३२]

कण कण रूप कला का श्रम का
चिन्तन का निखरा कंचन है
इस पावन भू पर तो निर्धन—
वह जन, जिसका मन निर्धन है।

[३३]

पावस अर्घदान देती है
स्नान करा जातीं ज्योत्स्नायें
करते सुमन समर्पित मधु दिन
शीश झुकातीं सुर-बालायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

स्वर्ण-रजत-मण्डित भवनों के—
कलश, स्वर्ग के द्वार खड़े थे
नगर-वासियों की श्रद्धा के—
पाँव, बुद्ध-उद्‌गार पड़े थे ।

[३५]

कहा उन्होंने, "मैं अन्तिम क्षण
वैशाली-दर्शन को आया
भिक्षु ! उधर पुरवासी उमड़े
श्रद्धा का सागर लहराया ।

[३६]

तुमने कभी देवजन ऐसे
उद्यानों में आते देखे
उनसे बहुत बड़े हैं निश्चय
ये लिच्छिवि-जन मेरे लेखे ।

[३७]

अति समृद्ध, सम्पन्न, सुरक्षित
हर्म्य वाटिकाओं की नगरी
'द्युतिपलाश'-शोभा-यौवन के
देवोद्यान यथा हों प्रहरी ।

[३८]

स्वर्ण, छत्र, मणिमण्डित वाहन
बहु पदाति, रथ, वाजि, गजाली
जिसका यह ऐश्वर्य विपुल है
धन्य धन्य वाश्कल वैशाली" ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

पथिक इसी भू के प्रांगण में
स्थिर हो कीर्तिध्वज लहराये
और गिरे तो किसी वंश ने
फिर उसके पद-चिन्ह न पाये।

[४०]

यद्यपि इसकी गरिमाओं की—
बात, अमिट अभिराम घनी है
कुछ भग्नावशेष वैशाली
आज एक इतिहास बनी है।

[४१]

देखो इस पतझर में देखो
विगत वसन्तों की हरियाली
छूट न जाये भू-अंचल से
महाजनों की यह वैशाली।

[४२]

यह अतीत, सागर-तम-तल है
इससे निज अभीष्ट के मोती
वही दृष्टि जो स्वयं गहन है
चुन-चुन कर मधु माल पिरोती।

[४३]

वर्तमान जो आज, वही कल—
होगा चिर अतीत का सपना
यही आजकल का निर्मम क्रम
खींच रहा जीवन-रथ अपना।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

किन्तु काल की निर्ममता से
कौन डरे, यह नियति अचल है
तोड़ काल के गति-क्रम-बंधन
बढ़ें जिन्हें प्रज्ञा का बल है।

[४५]

ऐसी ही प्रज्ञा का बल ले
एक महामति वह जन आया
जिसने इस वैभव की भू पर
कर दी आलोकों की छाया।

[४६]

तम झरता है वहीं, जहाँ तम,
ज्योति ज्योति का अंचल भरती
किसी नवोदय की वेला भी
पात्र समय के साथ उतरती।

[४७]

इसी धरा पर प्रज्ञा उतरी
इसी धरा पर अमृत बरसा
इसी धरा के मधु मारुत से
ऋतु फूली जन जीवन सरसा।

[४८]

भारत की भू संस्कृतियों की
सजग आदि भू सदा रही है
उसी सजगता की बाहों में
बन्दी यह भी एक मही है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४९]

अनतिदूर इस भू खण्डहर से
डूबा डूबा शून्य गहन में
सोया सा पद-चिन्ह समय का
वायु-विधूनित पंथ विजन में।

[५०]

एक ग्राम है वह कुण्डनपुर
वैशाली के मलिनांचल में
जैसे ऐश्वर्यों का साक्षी—
निश्चल, ऐश्वर्यों के छल में।

[५१]

आओ, पहले इस विभूति की—
भूति, शुचिष्मत् शीश चढ़ायें
मिट्टी की शय्या पर सोये
म्लान, कुसुम की गंध उठायें।

[५२]

यह रज कितनी शुचिताओं के
शीश-पुष्प का स्वर्ण बनी है
इस रज से भारत का चिन्तन
जगवन्दित है, धन्य-धनी है।

[५३]

घन अतीत, इतिहास विजनता
सर्व समर्थ समय का प्रहरी
रक्षित है इस भू का अर्जन
जन अनुमान-गुहा में गहरी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

अनुमानों की सुदृढ़ धरा पर
जव जब शोध-रश्मियाँ छूटीं
सत्य हुआ उद्दीप्त, समय के—
पथ से, भ्रम की गलियाँ छूटीं।

[५५]

आज वस्तु-वेत्ता का निश्चय
सप्रमाण प्रतिपादित थिर है
अनुमानों ने कहा कभी जो
वही सत्य को कहना फिर है।

[५६]

इसी ग्राम में सप्तशाल था
राजभवन सुन्दर भूपति का
सहज कला, उत्कृष्ट शिल्प में
दर्पण एक अमिट संस्कृति का।

[५७]

सोपानों पर मुद्रित मणियाँ
मणियों पर कंचन रज बिखरी
प्रतिमाओं दीपाधारों की—
कला कला थी निखरी निखरी।

[५८]

प्रांगण वेदी प्राचीरों के—
अंचल, नभ को अंक लिये थे
वारियंत्र स्नानागारों में
मधु उशीर की गंध पिये थे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

यत्र तत्र प्रासाद-पथों के
उभय पक्ष प्रस्तर प्रतिमायें
साधे थीं शोभा का अम्बर
कर कमलों पर बुध-बालायें।

[६०]

सद्मारामों में पिक केकी
शुक मयूर श्यामा गतियों से
दिगवकाश होते थे मुखरित
मोहक, यदा कदा ध्वनियों से।

[६१]

ऐसा लगता था नव-यौवन
हो वसन्त-यौवन पर आया
कलियों की अल्हड़ताओं का
विमल-हास-अंचल लहराया।

[६२]

यह न भ्रान्ति, यह सत्य अटल था
था उल्लास खिला कुंजों में
फूलों का हँसना हँसना क्या
कौन छिपा लतिका-पुंजों में?

[६३]

हम वसन्त कहते हैं जिसको
छवि है वह इन उद्यानों की
इन्हीं प्रसूनों की मुस्कानें
कण्ठ कला हैं अलिगानों की।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

आती थी इन उद्यानों में
राजबधू जब नव-परिणीता
लिख जाती थी नव यौवन की—
सुस्मिति, अधरों पर मधुगीता ।

[६५]

दे मधुवास दृगों प्राणों में
त्रिशला को सिद्धार्थ रहे थे
मन के सुमन, हृदय निज खोले
सरस सुरभि का हाथ गहे थे ।

[६६]

छू जिसकी सौन्दर्य-मधुरिमा
थी सुवर्णधन चम्पा सरला
मधु किंजल्क कुसुम सब हारे
त्रिशला सी केवल थी त्रिशला ।

[६७]

उसने गरिमा जातरूप की
रूप जात गरिमा में ढाली
मृगमद ने घनसार कमल ने
गंध भरी उसकी केशाली ।

[६८]

त्रिशला की वेणी तक चढ़ते
त्रिशला के यौवन की शुचिता
जीत चुकी थी, हिमजल शैशव
सोमकला, पावक घन सविता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

खंजन नयनों में निस्पृहता
अधर प्रवालों पर मधु बय थी
उस यथार्थ के अंग अंग पर
पावनता की, जय निश्चय थी।

[७०]

नृप के दृष्टि-गगन में मानो
पूर्णचन्द्र अभिराम खिला था
एक रूप-उपलब्धि, सहस्रों—
सौन्दर्यों का स्वर्ण मिला था।

[७१]

जब सिद्धार्थ धूप में चलते
त्रिशला घन छाया बन जाती
रहसि निशीथों के आंगन में
पूनम का मधुहास लुटाती।

[७२]

ऐसा भूपति ऐसी रानी
जीवन के सुख का क्या कहने,
दे सौभाग्य समर्पित नारी—
का, सबको ऐसा ही रहने।

[७३]

सत्यसंज्ञ सिद्धार्थ गये हो
पा सुशील त्रिशला सी रानी
त्रिशला तो तृष्ला थी, नृप की—
दृष्टि-तृषा ने तृप्ति न जानी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

यह त्रिशला थी कौन पथिकवर !
यह भी बात सरस सुनने की
जिसकी गंध गगन तक जाये
वह कलिका होती चुनने की ।

[७५]

था लिच्छिवि गणतंत्र प्रतिष्ठित
गौरव आर्यवर्त की भू का
घन अतीत में इसी धरा के
ज्यों सौभाग्य समृद्धि-वधू का ।

[७६]

स्वर्गखण्ड सम, प्रिय, मधुवेशी
अति ललाम, अति गौरवशाली
ज्यों मधुवन की श्री मूर्द्धा पर
शुचि गुलाब, सुरभित शेफाली ।

[७७]

अथवा किसी अमल सरसी के
अंचल में अम्भोज अकेला
वीचि-विलासों का मधु रंजन
सरस गंध-परियों का मेला ।

[७८]

किसी महासागर में तिरते
यानों का अथवा ध्रुवतारा
जिसने सुपथ दिया तो सबको
स्वयं किसी को नहीं पुकारा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७६]

सुगठित सुकृत-व्यवस्थित मण्डित
सत्कर्मों की सुभग सरणि था
राज्य ? राज्य था इष्ट फलद ज्यों
सब राज्यों की चिन्तामणि था।

[८०]

राज्य, राजलक्ष्मी के वश में
हो कर रहे धरा के सारे
रक्खे स्वयं राजलक्ष्मी ने
इस की छवि पर चांद सितारे।

[८१]

इस गणसत्ता के स्वामी थे
नृप चेटक इतिहास-यशस्वी
लिये धरा के आलोकों का
उदय अस्त ज्यों रवि तेजस्वो।

[८२]

इन्हीं नृपति की दुहिताओं में
ऐसी एक सुरूप सुता थी
रूप-स्वभाव-चकित जन परिजन
किसका सुख किसकी प्रभुता थी।

[८३]

एक सौम्य गरिमा थी उसके
शैशव की आँखों पर ठहरी
प्रात किरण की द्युति में बिम्बित
ज्यों, रूपाभ शरद दोपहरी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

धीरे धीरे चन्द्रकला सी
लगी गगन पर वय के चढ़ने
तन की वृद्धि हुई तो मन भी
लगा कल्पनाओं सा बढ़ने।

[८५]

थी अज्ञात प्रेरणा कोई,
जगी अहम् की रुचि अंतस में
एक एक डूबे जग के थे
जितने भी रस, सभी स्वरस में।

[८६]

था शृंगार रूप का होता
खिल खिल जाती थीं लतिकायें
त्रिशला की छवि, सलज खड़ी थीं
सौधारामों की प्रतिमायें।

[८७]

कसक, कमल कंचन हंसों की,
थी ज्योत्स्ना का ईर्ष्या-भाजन
दृष्टि स्वर्ग, उत्सव, प्राणों का
यौवन की वय, वय का यौवन।

[८८]

क्या रजनीगंधा मुस्काये
और हँसे भी क्या शेफाली
एक रश्मि अधरों की करती
दिवस कुहासे पूनम काली।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

मधुप मिले, लहराये विषधर
नहीं, नहीं पिक श्यामल कुन्तल
किसी विजन की गहन अमासे
साध रहे थे तम का अंचल।

[९०]

झुक जाते थे दृग, अलकें लख
नभ के शीश चढ़ी श्यामा के
मुक्ताओं से खेले कुन्तल
किस शशिवदना अभिरामा के।

[९१]

त्रिशला की वेणी के मोती
थे पल पल आलोक लुटाते
क्या गौरव निशि-नक्षत्रों का
जो प्रभात होते बुझ जाते।

[९२]

प्रांगण, मणिस्तंभ, कंचन-घट,
चलती तो द्युति से भर जाते
चरण-चरण पर प्रतिबिम्बों के
पंकज, पारिजात लहराते।

[९३]

अधरों की लावण्य-मधुरिमा
त्रपा-वशीकृत बिखर न पाती
थी मैरेय लहर नयनों में
गति चरणों की थी अलसाती।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

सौम्य शील गुण वाणी उसके
थी प्रसन्नवदना यह धरणी
रक्खा नृप ने विपुल स्नेह वश
इसका एक नाम प्रियकरणी।

[६५]

गुण अनुरूप नाम, प्रियकरणी
जननी और जनक का सुख थी
उन्हें लगा वह मुकुल-सुगंधा
नव वसन्त वय के सम्मुख थी।

[६६]

तरु से लता, सुमन से सौरभ
नवल अरुणिमा नव किसलय से
मिल कर ही शोभित होती है
वय-तरंग वय-रूप निलय से।

[६७]

प्रियकरणी को मिले योग्य वर
रूप कला विद्या अनुरागी
शौर्य-सिद्धि, वैभव का स्वामी
गणसत्ता-शासन-सुख भागी।

[६८]

नृप को सम्राज्ञी से करते—
परामर्श कतिपय दिन बीते
यह चिन्ता थी सत्य बनेंगे
कब यह स्वप्न सुखद मनचीते।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R.P.S
097
ARY-S

[९९]

लगे कल्पना के दर्पण में
चित्र विविध प्रतिभा के आने
उतरे मन की मधु गलियों को
वर्ण वर्ण के सुमन सजाने।

[१००]

एक नयन से ढलता जीवन
एक नयन प्रियकरणी भरती
रुकी समय की निश्चित सीमा
दिवसों के सोपान उतरती।

[१०१]

चेटक के मानस में सहसा
एक रूप उतरा मन भाया
जैसे तम के झीनांचल में
सुखद पूर्णिमा शशि लहराया।

[१०२]

उठीं नृपति की पुलकित पलकें
आशा ने कुण्डनपुर देखा
प्रियकरणी की सरल नियति ने
अंकित कर दी कंचन-रेखा।

[१०३]

निश्चित हुआ दिवस परिणय का
प्रात खिले आशायें फूलीं
संध्यायें उस मधुवेला के
सरल प्रतीक्षा-पथ में झूलीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

गगन वितान, दीप तारावलि
सोम मध्यमणि, स्तंभ दिशायें
दूर्वांचल वेदी की सज्जा
विहग शब्द नव गीत-कलाये।

[१०५]

प्रकृति किये थी प्रियकरणी के—
परिणय की अद्भुत तैयारी
झूम रही थीं नवल लतायें
तरुओं में थी हलचल भारी।

[१०६]

मंत्र-ध्वनि के साथ भवन की
नव बालाओं ने गुण गाते
उस मधु पल की पावनता पर
रूप प्रणय शृंगार लुटाते—

[१०७]

वेदी पर सिद्धार्थ नृपति को
प्रियकरणी के साथ बिठाया
यथा समय ने, पूर्ण काम को
रति सकाम के साथ सजाया।

[१०८]

पूर्ण महाचार्यों ने जब की
प्रथा सविधि सम्पूर्ण समय की
हुआ एक आलोक अलौकिक
सहसा वेदी पर परिणय की।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

महाश्चर्य में डूबे डूबे—
मौन रहे आगत जन सारे
श्वास श्वास पर ठहरा ठहरा
और नयन को नयन पुकारे।

[११०]

यह आलोक अलौकिक अविगत
सुना किसी ने कभी न देखा
अद्भुत है निश्चय ही अद्भुत
प्रियकरणी का जीवन-लेखा।

[१११]

कुल गुरुओं ने शुभाशीष दे
कहा, "सिद्धि लूटो अग जग की
जहाँ चलो तुम चरण चरण पर
कंचन हो रज पंथ सुभग की"।

[११२]

उस भू ने समझा निश्चय ही
पके पुण्य फल आज हमारे
जग जीवन में नव दम्पति का—
अर्जन, जीवन-सत्य उतारे।

[११३]

पतिगृह यात्रा पर प्रियकरणी—
चली, चले सेनप पहुँचाने
विपुल वस्तु सम्पति कितनी ही
कितने थे गजवाजि न जाने।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

सुता विदा की वेला मन में—
हर्ष, और नयनों में पानी
यह अनुभूति जनक जननी की
जनक और जननी ने जानी ।

[११५]

चित्र उतारे गृह-बालायें
रहीं अश्रुओं के दर्पण में
'एक सरस पींड़ा भी सोई—
थी, उस पल के आमंत्रण में' ।

[११६]

यह जाना तो जाना केवल
शैशव से पलती ममता ने
छोड़ दिये संयम के पकड़े—
कर, सारी संचित क्षमता ने ।

[११७]

थीं उत्साहों उल्लासों की—
गतियाँ उन्मन पलकें गोली
हुई विपुल झंझा के तन की
मन की सभी शिरायें ढीली ।

[११८]

था जीवन्त जहाँ उत्सव-सुख
सुख था जीवन-सुख से दूना
एक विहग ने नीड़ बदल कर
किया सुहाना मधुवन सूना ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११९]

क्या उत्सव कैसा सूनापन
ऐसे ही सब दिन चलते हैं
पल दो पल की कहीं उदासी
और किसी के सुख पलते हैं।

[१२०]

म्लान हुआ होगा कोई गृह
गलियां फूलीं वैशाली की
नवागता के वैभव की जय,
जय मधु-यौवन-वय वाली की।

[१२१]

राजवधू का स्वागत करने
नगर नगर के जन उमड़े थे
लगता था सद्भाव प्रजा के
विविध रूप, साकार खड़े थे।

[१२२]

कल जो राजसुता थी वह ही,
आज राजसत्ता की रानी
उभय पक्ष सन्तोष तरंगित
मिली सुधा माँगा था पानी।

[१२३]

सप्त दिवस संगीत नृत्य में
स्वागत-समारोह के बीते
राजवधू ने विनय कला रुचि
गुण गण से सबके मन जीते।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

रत्नाभरणों से समलंकृत
वयोन्माद के बाहु बढ़ाये
प्रमदाओं के त्वरा-त्रस्त मन
छू न छोर उस सुख का पाये।

[१२५]

थी उत्साह-ज्वार में डूबी
राजहर्म्य-सागर की वेला
बिखरे माणिक मुक्ताओं की
करते थे कर पग अवहेला।

[१२६]

राजसदन था मुकुलित मधुवन
नवल वधू नव रजनीगंधा
सब के प्राण बसी अनुकामा
वह अप्रतिहत मधु-अनुबंधा।

[१२७]

चिन्त्य कौन सी सिद्धि शेष वह—
सभी सिद्धियाँ लेकर आई
रही न शशि तारों की दूरी
रही न सागर में गहराई।

[१२८]

था अजातरिपु शासन नृप का
हुआ सुलभ सब नृप की गति को
त्रिशला का सौभाग्य सहज था
चतुर्वर्ग सम्प्राप्ति नृपति को।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२६]

यह ही राजवधू त्रिशला थी
प्रियकरणी चेटक नृप तनया
राजकार्य की सन्मति-प्रेरक
राजभवन की पावन-प्रणया ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग २

[१]

उतरा दीप-शिखायें रखता
कौन पलाशों की चोटी पर
किसने वन, उपवन, निर्जन में
छोड़े नव शोभाओं के शर—

[२]

भेद गये थे जो रसवन्ती
दृग अप्सरियों का अन्तरतम,
प्राण प्राण में करवट लेती
एक अपरिचित इच्छा दुर्दम।

[३]

किन हिमशिखरों की मदिरा पी
डूब रहा मधु में पिक-कूजन
कौन गया कर पग पग पिच्छल
परिमल से पृथिवी का आंगन ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

ले अपने चंचल पंखों पर
शीत-तरंगावलि का सागर
द्रुम-कुंजों, पल्लव-पुंजों में
मृदु मर्मर का भर स्वर मनहर—

[५]

वासन्ती सौरभ का वन ले
विहर रहा था सरस समीरण
फेंक रहे थे मधु गीतों के—
मोती, निर्झर के द्रुतलय क्षण।

[६]

पवन-परस-पुलकित वल्लरियाँ
दृढ़ता का जैसे करतीं छल
वायु व्याज था, तरु उपस्थ से
परिरम्भों का मन था चंचल।

[७]

छोड़ रहा था मृदुमलयानिल
नवल कली के मुख पर चुम्बन
एक गीत, वह जिसको सुनकर
कांप उठे सिर चढ़ता यौवन।

[८]

थे सहकारों के वन के वन
मन-विक्षिप्त पुलक तन आकुल
वकुल-कुलों के जीवन फूले
कासारों के कूल गये खुल।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

अरुण मुकुल, कुरवक, नव किसलय
नयन नयन के नव आकर्षण
थे अशोक कचनार कदम्बों—
से झरते मुस्कानों के कण ।

[१०]

कली कली से बढ़कर बोली
गंध, गंध पर चढ़, अपना मन—
लिये लिये फिरती थी स्वैरा
निभृत निशावासों में निस्वन ।

[११]

मधुगंधा भू, गगन तरंगित
निखरा आशाओं का यौवन
एक प्रणय-व्यापार सघन था
आदि अन्त सारा जड़ - चेतन ।

[१२]

प्रणय-वशीकृत प्रमदाओं के
लहराये नव यौवन-अंचल
थे प्रसून-मंजरियों के मन
भरे सलज सौरभ से अविरल ।

[१३]

नव हरीतिमा की बाहों में
ठहरा ठहरा सा आमंत्रण
हिला न देता जिसको, ऐसा—
रहा नहीं कोई संयम प्रण ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

थे अभिसार, मदिर ज्योत्स्ना के
ढूँढ़ रहे शय्याओं के पथ
मचल रहे थे अपनी अपनी
आशाओं के अन्तहीन अथ।

[१५]

वश की बात नहीं रुक जाना
और उड़े तो उड़ना क्या कम
मन-विहंग के लिये नहीं था
कोई भी गिरि नभ पथ दुर्गम।

[१६]

ऋतु के मन पर चढ़े हुये थे
यौवन के अभिलाष अलक्षित
मधुप कहाँ तक लख सकता है
कलिकाओं का कंचन सिंचित।

[१७]

लगा छोड़ने कामिनियों को
धीरे धीरे चिर लज्जा-धन
लगे फड़कने भुज-बंधों में
समय-सुप्त साग्रह आलिंगन।

[१८]

वह मधु वेला, सुरभि, समीरण
हरित धरा, शोभन नीलाम्बर
मधु के दिवस सजा कर लाये
एक प्रश्न के कितने उत्तर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९]

सरल सांझ ने क्षितिज अधर पर
छोड़ दिया सिन्दूरी आनन
फैल गये तम-छाया जैसे
अंजन के घन से कुन्तल घन।

[२०]

उदित हुये निशिकर, प्राची के—
वातायन से जैसे निर्झर,
छूटा वह आलोक, दिशा भू
अम्बर के अवकाश गये भर।

[२१]

कुण्डनपुर के सौधारामों—
का सुरूप अनुपम चिर अभिनव
झूम उठा था पी पूनम के
सुधास्नात यौवन का आसव।

[२२]

हुये तरंगित चुम्बन अलि के—
कितनी बार कली के मुख पर
चिर अतृप्ति के मधु गुंजन से
हो न सका मन मधुवन अमुखर।

[२३]

बर्षागम से पूर्व सुखद नभ
अभ्रहीन अलसाया अग जग
रहे सतत सिद्धार्थ प्रिया की
मधुर कल्पनाओं से अविलग।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

झुके कमल मुस्काये किसलय
हिले गंध के कुड्मल-बन्धन
लगा तरंगित होने सहसा
शशि-मुख देख नृपति का तन मन ।

[२५]

श्यामांचल में निशा-वधू की
मुस्कानों से गृह बन उपकृत
मुक्त मदिर मधु स्वर श्यामा के
बरसाते वसुधा पर अमृत ।

[२६]

घनाश्लेष आबद्ध विजन में
ओढ़े झीन चन्द्रिका चादर
लगे चेतना के व्यापारों—
से, वे प्रतिमाओं के प्रस्तर ।

[२७]

फिर चेतन की क्या, अधरों पर
उतरें यदि अधरों के विद्रुम
आर्द्र कपोलों के उत्पल हों
मस्तक पर मस्तक का कुंकुम ।

[२८]

विगत हुई वह मधुमय रजनी
उड़े दिवस पुरवा पंखों पर
तन पर उदित हुये रानी के
नवल रूप-गरिमा के उपसर ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

सालस गुरु गति, कोमल चितवन
गये विहँसते चपल पलक झुक
किसी विकासोन्मुख कलिका को
देख, यथा दो मधुप गये रुक।

[३०]

जहाँ देखती खिल खिल जाते
सुमन अनागत के अति संभव
लिये दृष्टि-अंचल में मानो
मधुर कामनाओं के उत्सव।

[३१]

नन्द्यावर्त-भवन दीर्घा में
नृप ने कभी दृगों में रख मन
हर्ष और विस्मयमय सुख से
देखा महिषी का चन्द्रानन।

[३२]

उसी समय वार्ता के क्रम में
त्रिशला के अधरों की सुस्मिति
सरस अपांगों की भाषा में
गई व्यक्त कर मन की संस्थिति।

[३३]

दुर्बलता से स्वल्पाभा तन
शृंगारों में रही नहीं रुचि
रानी हुई विरल-तारा द्युति
प्रात निशा के सदृश सरल शुचि।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

भ्रमर निलीन-नलिन, चम्पा के—
कुसुम प्रफुल्ल लिये मुख नीलम
हो न सके महिषी के कषमुख
सरस उरोजों की श्री के सम।

[३५]

अम्ल लवण प्रिय तृष्णाकुलता
नत नयनों में बन्दी सा मद
यौवन सुरा चढ़ी तो इतनी
कोई गति पद था न निरापद।

[३६]

कभी मनस्थ किये रहती थी
पूर्व महापुरुषों के जीवन
और कभी दिवसों तक चलता
जीवन में नव जीवन-दर्शन।

[३७]

था न निषेध नृपति का कोई
त्रिशला का सुख था उनका सुख
अशन वसन परिहास सुरुचि के
रहे सभी अनुचर सम सम्मुख।

[३८]

गृहोद्यान, जलयंत्र, विहग-गृह
थे उसके कामद क्रीड़ा-स्थल
देती मौन मरालों के मुख
मृदु मृणाल, उत्सिंचित उत्पल।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

कभी निशीथों के पल मादक
लेकर नृत्य गीत की सिहरन
कर देते थे भाव-सुरभि से
रानी का पुलकाह्लादित मन।

[४०]

इसी रूप रजनी दिवसों का
क्रम चलता निज पथ पर अविरत
करता रहा सुलभ सुविधायें
नृपति राजमहिषी-रुचि-सम्मत।

[४१]

एक दिवस उस ऋतु के नभ में
घिरे नवल असिताभ-जलद घन
मस्त मयूरों के घन रव से
गये रसाल-निकुंज, गगन बन।

[४२]

सर सरिताओं ने पाया नव—
जीवन, जीवन में डूबे तट
बूँद बूँद से तृप्त गये भर
तृण दूर्बाओं के मानस-घट।

[४३]

मुरज मेघ, दीपावलि चपला
व्योम वितान, नटी, नव पावस
नूपुर ध्वनि बूँदों की रिमझिम
बरसा विपुल झूम कर रस रस।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

इस वर्षा-मंगल-सज्जा का—
मंच धरा, दृष्टा जड़ चेतन
लहरा जाता इन्द्रधनुष का
कभी कभी सतरंगी केतन।

[४५]

विशद हुये तट पयस्थलों के
लगा गर्भ में जीवन पलने
भू महिषी की आशाओं पर
रचे इन्द्रधनु, तृप्ति सुफल ने।

[४६]

एक निशा पावस का प्रांगण
हुआ चन्द्रिका-धौत नभोपरि
छिन्न-कुहर-पट-वातायन से
उदित यथा हिमहास-विबुध सरि।

[४७]

त्रिशला ने अन्तिम प्रहरों में
देखा अद्भुत स्वप्न-समागम
था जिसके उन लोक-बहुश्रुत
षोड़श रूपों का क्रम अनुपम।

[४८]

हुआ प्रभात किया भूपति से
त्रिशला ने साश्चर्य निवेदन
कैसे कटीं स्वप्न की घड़ियाँ
और रहा कितना आकुल मन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४९]

"महाराज ! कल प्रात निशा में
मैंने स्वप्न अलौकिक देखा
विविध रूप शोभा दृश्यों का
है जिसके, विचित्र कुछ लेखा।

[५०]

गर्जन करी, वृषम दो, मृगपति
लक्ष्मी कुंजर-घट-अभिसिंचित,
माला-युग्म, शशांक दिवाकर,
दो झष, दो कंचनघट मण्डित।

[५१]

पद्म सरोवर, क्षुब्ध पयोनिधि,
देवयान समलंकृत मनहर,
नाग-वास, मणिराशि प्रभामय,
धूम रहित प्रज्ज्वल वैश्वानर"।

[५२]

एक एक कर क्रम घटना के
एक एक कर रूप अलेखे
चित्रित किये सकौतुक ऐसे
मानों स्वयं भूप न देखे।

[५३]

और कहा, "इस अगम स्वप्न से
मुझे हर्ष है, है विस्मय भी
मेरे मन को मूढ़ किये है
आशा के अंचल में भय भी"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

सुन कर सारा स्वप्न सविस्तर
लगे भूप भी विस्मित होने
नव्योल्लास-सुधा धारा से
रूप कल्पनाओं का धोने।

[५५]

बोले, "सुमुखि ! तुम्हारे अद्भुत
सुखद स्वप्न की बात बड़ी है
और अनागत की घटनाओं—
के क्रम की यह प्रथम कड़ी है।

[५६]

स्वप्न-ज्ञान, ज्योतिर्विद्या में
सुन्दरि ! जो मेरा अर्जन है
उस के बल पर ही तो मेरे
शब्दों की वाणी सुख-धन है।

[५७]

यह जो शिशु गर्भस्थ तुम्हारे
महापुरुष होगा वह जग का
अखिल लोक अनुसरण करेगा
कभी उसी के पंथ सुभग का।

[५८]

पद्म सरोवर सार्थ स्वप्न का
उस जीवन की निर्मलता है
और तरंगित सागर, यश की
निर्विकार दृढ़ व्यापकता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

गज, गज-कलश-षिक्त लक्ष्मी का
अर्थ, उसे देवत्व मिलेगा
और पुष्प मालायें द्योतक—
हैं, कि ज्ञान का कमल खिलेगा।

[६०]

शशि, रवि, मत्स्य, कलश ये सब हैं
दृढ़ प्रतीक स्वस्थायु-सिद्धि के
देवयान, नागेन्द्र-भवन, मणि—
वैश्वानर ये तप-समृद्धि के।

[६१]

सुभगे ! सिंह प्रकट करता है
सर्वोपरि है इसकी वाणी
वृषभ-युगल का प्रिय फल यह है
जग-वन्धन-विरहित यह प्राणी।

[६२]

और सुनयने ! अधिक कहूँ क्या
देखो जो जीवन दिखलाये
कुछ संशय की बात नहीं है
निश्चय ही यश के युग आये।

[६३]

यह इस भू पर वय-प्राप्त हो
जन-जीवन कल्याण करेगा
विविध व्यथा विपदा से व्याकुल
जन जन का सन्ताप हरेगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

हिंसा, चौर्य, परिग्रह-पीड़ित
मानवता को गति कल्याणी
शान्ति-सुधा, सुख दुख समरसता
निर्भय देगी इसकी वाणी"।

[६५]

स्वप्न-फलागम सुन त्रिशला के
नयन सरल, सुख से भर आये
प्रात रश्मि लख कमल कली ज्यों
ओस कणों से पलक सजाये।

[६६]

एक बार सुधि के दर्पण पर
स्वप्न-चित्र जब पुनः उतारा
देखा उसके चकित दृगों ने
दिव्यालोक भरा जग सारा।

[६७]

आशाओं से खिली दिशायें
मानस मानस सा लहराया
छू न तरंगों ने तट पाये
ज्वार ज्वार पर बढ़कर आया।

[६८]

हर्षोत्फुल्ल हृदय रानी का
रह न सकी, क्षण, सहसा बोली
वह मधुवात-वेग से पुलकित
नव माधवी लता सी डोली।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

"क्या निश्चय यह सत्य कि त्रिशला
होगी ऐसे सुत की जननी
क्या उसका सौभाग्य करेगा
उस पर यह अनुकम्पा अपनी"।

[७०]

गर्भवती त्रिशला की सेवा
करने लगीं देव-बालायें
अप्रत्यक्ष रहीं कितनी ही
देवजनों की अन्य कृपाये।

[७१]

गये प्रतीक्षा के दिन घटते
और प्रसव का शुभ पल आया
त्रिशला ने निज सुभग अंक को
दिव्य रूप से शोभित पाया।

[७२]

सौम्य मृदुल स्वर था रोने का
थीं अकम्प पलकें गतिकामा
कुंचित केश-शीश को मानों
दृष्टि-छाँह देती थी श्यामा।

[७३]

कोमलता में किसलय कलिका
अरुणाभा में पंकज-पाँखें
फूल उठे सब लख नव शिशु के
मनमोहन कपोल, कर, आँखें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

त्रिशला निभृत कक्ष में अपने
शिशु-मुख-छवि नयनों में ढाले
लगता पुलक, गर्व, आशा के
उत्सव से मन मध्य सम्हाले।

[७५]

नन्द्यावर्त भवन कुण्डनपुर
भाँति भाँति से गये सजाये
मुग्ध देवताओं ने नभ से
मणि, माणिक, मुक्ता बरसाये।

[७६]

रत्न राशियों की यह वर्षा—
रही, एक संवत्सर बीता
भव्य भविष्यत् ने नव शिशु के
धनाधिपति का वैभव जीता।

[७७]

सिद्धि समृद्धि भरे जन, जनपथ
स्वर्ग उसी भू पर था जैसे
और प्रजा ने उत्सव-सुख के
प्रथम बार देखे दिन ऐसे।

[७८]

सुमन वीथिकाओं में बिखरे
प्रासादों पर रंजित छाया
जनोल्लास साम्राज्य धरा पर
नव वसन्त बन कर गहराया।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

राजभवन, उत्सव-प्रांगण में
प्रमदाओं की भीड़ बड़ी थी
अखिल रूप यौवन की संसृति
हर्ष-विसुध, साकार खड़ी थी।

[८०]

एक यही अनुभूति प्रबल थी
प्राण प्राण में अविरल पग पग
अपर्याप्त थे उस सुषमा के
दर्शन के निमित्त ये दो दृग।

[८१]

गंध-फुहारों से मधुमय थे
सकल नगर के द्विपथ चतुष्पथ
तरुकुंजों में क्रीड़ाओं के
हुये कहीं आमोद न विश्लथ।

[८२]

कहीं मधुर संगीत, स्वरों से—
राग राग का अमृत बरसा
कहीं नृत्य निर्झर का मधु पी
जन जन प्राण-रसा थी सरसा।

[८३]

कहीं धर्म प्रवचन की वाणी
कर्म-ज्ञान आलोक बिखेरे
थी गार्हस्थ्य-धर्म-व्याख्या से
पथ पथ का जीवन-पथ घेरे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

कहीं सुसंचित राशि राशि थे
विपुल द्रव्य विभवानुप्राणित
था औदार्य राज-लक्ष्मी का
दान-व्यस्त, युग-अप्रत्याशित ।

[८५]

नगर रूप शृंगार विपुल से
किसने क्या क्या अर्थ न पाया
जो भी गया रंच रुचि लेकर
वह सिद्धार्थ लौट कर आया ।

[८६]

रहे किसी के नयन न प्यासे
रहा न कोई अंचल रीता
छलक रही थी जैसे घट घट
नगर-सिद्धि-सुषमा संप्रीता ।

[८७]

उस उत्सव में राज्य राज्य के—
भूप, स्नेह श्रद्धा वश आये
हो प्रसन्न शुभकाम धरा ने
यश लूटा, आशीष लुटाये ।

[८८]

उत्सव के उपरान्त रहा ही
कुछ दिवसों तक उत्सव होता
जैसे सोकर जगने वाला
कुछ क्षण रहता जगता सोता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

उत्सव की निद्रा में सोये
सारे नर नारी मनमाने
और जगे तो सबके सम्मुख
लगे कर्म-पथ खुल खुल जाने।

[९०]

कहीं दृगों में शिल्प जगा तो
कहीं सघन व्यापार गये जग
विविध योजना व्यवहारों में
भूपतियों के भाव गये लग।

[९१]

कुण्डनपुर की जनरवसंभृत
गति-चंचल गलियाँ अलसांई
वायु विडोलित तरु के पीछे
तप में ज्यों तरु की परछांई।

[९२]

त्रिशला को सुत मिला, धरा को–
नव आलोकों का उदयन रवि
दिशा दिशा के मृदु अंचल को
कल खिलने वाले दिन की छवि।

[९३]

हुई शस्य श्यामल वसुधा की
शोभा अतुल अपूर्व निराली
अम्बर के नीचे अम्बर सी
निखरी नव मधु-स्नात वनाली।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

उद्योगों के अंकुर फूटे
लाभों पर व्यापार गये चढ़
जन-मानस, सुकृतों के पथ पर
और वेग से आप गये बढ़।

[६५]

चलते चलते सिद्धि-शिखर तक
गया राज्य कृत-पुण्य सम्हाला
और प्रगति के किसी चरण को
मिला नहीं पथ शूलों वाला।

[६६]

हाथ लगाया जिसने रज को
गया हाथ लग उसके मोती
गई निरन्तर पूर्ण राज्य में
वृद्धि चतुर्दिक सुख की होती।

[६७]

नवल विहानों के हँसते मुख
संध्याओं के सुख सिन्दूरी
किये हुये थे गृह गृह जन जन—
के मन की अभिलाषा पूरी।

[६८]

थे सिद्धार्थ चकित अद्‌भुत, श्री
अखिल राज्य ने कैसे पाई
निःसन्देह सिद्धि यह नूतन,
साथ नवागत के ही आई।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

वृद्धि राजसत्ता-सुख-यश की
हुई जन्म से जिसके अविरत
'वर्द्धमान' अभिधेय नृपति ने
दिया पुत्र को निज मन-सम्मत ।

[१००]

परिजन-बालाओं की सुखमय
अंक-सेज के सतत हठीले—
वर्द्धमान के मृदु कपोल कर
रहते थे चुम्बन-रस-गीले ।

[१०१]

क्षुधा, कष्ट, असुरक्षा अथवा
कभी भुजाओं में ही सोना
कोई भी अनुभूति प्रबल हो
थी अभिव्यक्ति एक बस रोना ।

[१०२]

करतल, अधर, कपोलों से थे
लज्जित अरुण कमल दल अभिनव
उत्साहों के उत्स मचलते
शत योजन पीछे रख शैशव ।

[१०३]

तन पर किसी आवरण को भी
टिकने देते सहज न दो पल
करते कर, पद, आघातों से
ध्वस्त शयन का कोमल अंचल ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

बदनाम्बुज की फड़क, स्वप्न को—
मानों कोई सत्य मिला हो
ले जाने को गंध दूर तक,
अथवा अन्तस मधुप हिला हो।

[१०५]

अर्द्ध निमीलित दृग तिरती हों
यथा पूर्व-जन्मों की सुधियाँ
और कभी अधरों पर आतीं
मन्द मन्द निश्छल सुस्मितियाँ।

[१०६]

कभी देर तक रोने का माँ
जान न पातीं कारण ऐसे
अनुमानों से सत्य जगत का
मिलता नहीं हृदय को जैसे।

[१०७]

लगे दौड़ने शयन-कक्ष की
मणि-मण्डित भू पर प्रांगण में
था सर्वत्र एक कौतुक सा
विहग, कुसुम, ज्योतित कण कण में।

[१०८]

लगे बालमित्रों से करने
निःसंकोच बहुत सी बातें
बहुत सुहाने लगते गृह के—
दीप, सरस तारों की रातें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०६]

शशक, सिंह, गज, नगर विजन वन
कोई राजा कोई रानी
सो जाया करते थे सुनते—
सुनते, रसमय कभी कहानी।

[११०]

और कभी तो बहुत समय तक
एकाकी बैठे रहते थे
उस एकाकीपन में निश्चल
स्वयं स्वयं से कुछ कहते थे।

[१११]

रोक नहीं थी मन की गति की
डरते तो जननी से डरते
बड़ों बड़ों को विस्मित कर दें
ऐसे प्रश्न निरन्तर करते।

[११२]

वर्द्धमान का शैशव लाया
कुछ अति रोमांचक घटनायें
देव-सभा तक पहुँचीं उनके
धैर्य, पराक्रम की गाथायें।

[११३]

कहा इन्द्र ने, "कुण्डनपुर का
राजपुत्र सिद्धार्थ-तनय है
जिसका शौर्य, पराक्रम धी बल
अद्वितीय है और अजय है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

मनुज देव हो अथवा दानव
कर न सकेगा उसे पराजित
आकल्पान्त रहेगा उसका—
यश, भू पृष्ठों पर स्वर्णांकित"।

[११५]

सहसा 'संगमदेव' सभा में
कर न सका विश्वास कथन का
ऐसा अतिरंजित प्रस्थापन
देवराज-कृत, मानव जन का!

[११६]

उसे लगा धरती का कंचन
जो भी हो केवल कंचन है
अंशुमान के सम्मुख उसका
अभिनन्दन, क्या अभिनन्दन है?

[११७]

उसने त्रिशला के सुतवर की
स्वयं परीक्षा लेनी चाही
अविश्वास को अनुभव अपना
निश्च्छल कहना सत्य पड़ा ही।

[११८]

एक बार जब वर्द्धमान थे
बाल-सखाओं का दल लेकर—
रहे आमली खेल, भवन की
वट-निकुंज-छाया में सुखकर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११९]

खेल मग्न उन नव बालों को
अन्तक सदृश्, दृष्टि-दुर्वह सा
उस न्यग्रोध वृक्ष से लिपटा
विषधर हुआ दृष्टिगत सहसा।

[१२०]

कुछ बालक भय-भीत दृश्य से
गये पलायन कर पल भर में
वर्द्धमान ने किन्तु न देखा
कोई भी भय उस विषधर में।

[१२१]

आ उसके सन्निकट अकम्पित
एक दृष्टि कुछ हँस कर डाली
यथा किसी चंचल बालक ने
वस्तु बड़े कौतुक की पा ली।

[१२२]

वह पन्नग प्रलम्ब्र नृप सुत ने
एक रज्जु सा सहज उठाया
और दूर जाकर ही छोड़ा
दिया न त्रास न क्रोध दिखाया।

[१२३]

वर्द्धमान के बाल-सखाओं—
ने, अतिशय उल्लास मनाया
चले गये जो दूर उन्हें भी
पुनः खेल के लिये बुलाया।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

इस घटना ने वर्द्धमान के
सहज धैर्य की व्याख्या कर दी
एक बार में ही 'संगम' के—
अन्तर्मन की झोली भर दी।

[१२५]

कर कंधस्थ लिया, शिशु-पौरुष—
वर्द्धमान, को उस सुर वर ने
और प्रफुल्लित हुआ यहाँ तक
लगा नृत्य बेसुध हो करने।

[१२६]

'महावीर' कह वर्द्धमान को
इन शब्दों के साथ दुलारा
"तुम युग की आत्मा में उतरो
हो सारा संसार तुम्हारा"।

[१२७]

किन्तु बदलते करवट फिर फिर
संशय से उसका मन डोला
चढ़ते रवि को आवृत करने
वृद्ध विहग ने साहस तोला।

[१२८]

सत्यबोध 'संगम' को उसकी
दे न सकी, वह प्रथम पराजय
एक बार सम्मुख आने का
और किया उसने दृढ़ निश्चय।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२९]

मित्रजनों के साथ खेलते
वर्द्धमान जब थे तिन्दूशक
कोई अद्भुत रूप कहीं भी
देखा न था उन्होंने अब तक।

[१३०]

सप्त ताड़ तरु सदृश तुंग तन
विशालाक्ष अत्यन्त भयंकर
अकस्मात क्रीड़ा में उनकी
प्रकट हुआ 'संगम' पा अवसर।

[१३१]

उसे देख भय-आकुल भागे
त्वरित खेंल के साथी सारे
वर्द्धमान ने समझा सम्मुख
मायावी है एक हमारे।

[१३२]

और पृष्ठ पर चढ़ कर उसके
मुष्टि-प्रहार किया दृढ़ता से
चीत्कार कर वज्रघोष सा
दुखी हुआ अपनी जड़ता से।

[१३३]

"वही सत्य है कहा इन्द्र ने
जो कुछ सौधर्मेन्द्र-सभा में"
हृदय हुआ उज्ज्वल संगम का
तम जैसे आलोक-विभा में।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३४]

तीर्थंकर की अविकल आत्मा
हुई अवतरित वर्द्धमान में
'संजय' 'विजय' मुनि-द्वय को था
कुछ संशय इस जन-निदान में।

[१३५]

इसी परीक्षा-हेतु लिये कुछ—
प्रश्न निकट वे उनके आये
विन पूछे ही वर्द्धमान से
उनके समुचित उत्तर पाये।

[१३६]

यह देखा तो उन मुनियों के
महाश्चर्य की रही न सीमा
डूबा तृप्ति-गहन में, मन की
तिरती शंका का स्वर धीमा।

[१३७]

वर्द्धमान से उन मुनियों ने
कहा "आप निश्चय 'सन्मति' हैं
'ऋषभ','अजित','संभव','अभिनन्दन'
'सुमति'—शृंखला की सन्तति हैं"।

[१३८]

वर्द्धमान के किसी मित्र के
एक प्रश्न का देती उत्तर
त्रिशला बोली, "बड़े कक्ष में
वर्द्धमान हैं देखो ऊपर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३९]

ऊपर के निर्दिष्ट कक्ष में
वर्द्धमान को कहीं न पाया
वहाँ नृपति थे, उनसे पूछा
और लौट कर नीचे आया।

[१४०]

वर्द्धमान थे नहीं वहाँ भी
हुआ सरल बालक को संशय
यह क्या स्थिति है गुरुजन सम्मुख
तर्क करूँ तो होगा अविनय।

[१४१]

माँ त्रिशला कहतीं ऊपर है
और पिता कहते है नीचे
तो क्या मैं फिर देख रहा हूँ
अपनी दोनों आँखें मींचे।

[१४२]

वर्द्धमान फिर उस बालक को
मध्य-भाग में दिये दिखाई
उनसे मिलकर शंकित विस्मित
उसने सारी बात सुनाई।

[१४३]

वर्द्धमान ने कहा, "सत्य हैं—
दोनों, इसमें संशय ही क्या
हम ही क्यों कुछ मिथ्या मानें
अटल सत्य-स्वीकृति में भय क्या।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४४]

माँ का कथन कि 'ऊपर हूँ मैं'
सत्य क्योंकि मैं भू पर कब हूँ
और पिता का कथन कि 'नीचे'
सत्य, क्योंकि मैं ऊपर कब हूँ।

[१४५]

नीचे की अपेक्षा ऊपर
ऊपर की अपेक्षा नीचे–
मैं था, रहे तुम्हीं तो निज को
दूर सत्य-निर्णय से खींचे।

[१४६]

सत्यान्वेषण के निमित्त है
निरसन सदा अभीष्ट अहम का
जो अस्थिति है स्थिति भी है वह
अन्तर है जन के अधिगम का"।

[१४७]

शनैः शनैः लालन पालन की
वयः सरणि पर चलते चलते
गये मधुर शैशव के निस्पृह
दिवसों से कुछ दूर निकलते।

[१४८]

वर्द्धमान की शिक्षा के हित
पूर्ण व्यवस्था कर सुनियोजित
सकल ज्ञान-वारिधि गुरुओं को
किया भूप नें पुत्र समर्पित ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४९]

विद्यालय में सुन कुमार का
शुभ प्रवेश सुरराज पुरन्दर
हुये उपस्थित उनके सम्मुख
वृद्धि व्यक्ति का वेश ग्रहण कर ।

[१५०]

और प्रश्न वहुविध विषयों के
जो प्रतिभाओं का निदान थे
उनसे किये अनेक स्वयं जब
महाचार्य भी विद्यमान थे ।

[१५१]

वर्द्धमान नें उन प्रश्नों के
दिये सारगर्भित जो उत्तर
गुरुजन भी उनकी प्रज्ञा से
रहे चकित होकर ही पल भर ।

[१५२]

वृद्ध वेशधारी वासव नें
महाचार्य से कहा कि, "निश्चय
इस बालक की बुद्धि अलौकिक
अननुमेय, अप्रतिरव अक्षय ।

[१५३]

कौन ज्ञान है क्या शिक्षा वह
जो इसको संप्राप्त नहीं है
दे पाओ तो दो विशेष कुछ
देखो यदि कुछ प्राप्य कहीं है" ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५४]

गुरुओं की सारी क्षमतायें
विद्यादान-कर्म में रत थीं
उन्हें लगा उस राजपुत्र को
सब विद्यायें हस्तंगत थीं।

[१५५]

क्या अर्जन अवशेष, किये थी—
पूर्व-भवों की प्रभुता छाया
मति, श्रुति, अवधि-ज्ञान मुट्ठी में
साथ जन्म से जिसके आया।

[१५६]

खुला सत्य व्यवहार नीति की
प्राप्त उन्हें सर्वांग सुमति थी
दर्शन, तत्वज्ञान, पुराणों,
साहित्यों में अद्भुत गति थी।

[१५७]

विद्यालय में वर्द्धमान का
मनन सघन, अध्ययन विरल था
विषय आज की चिन्ताओं का
अविदित आने वाला कल था।

[१५८]

दिवस लगें अब वय पर रखने
कुसुम-कान्ति मोती का पानी
मौन निशाओं के निर्जन में
पढ़ते थे अज्ञात कहानी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५६]

तर्क निखरते गये, दृगों में—
आ बैठी क्षितिजों की दूरी
चिन्तायें कारण कार्यों की
नहीं छोड़ते कभी अधूरी ।

[१६०]

अब न अधिक आनन्द-विधाता
रहा बालमित्रों का मेला
गया खिसक वह शैशव रुचि से
जो अनेक रूपों में खेला ।

[१६१]

तप बीता, बीतीं बरसातें
शरद शीत कुसुमाकर बीते
लगे सुरभि-जिज्ञासाओं से
भरने सुमन-भाव-घट रीते ।

[१६२]

उन्नत भाल ललाम दृगों में
चिन्तन की बढ़ गई दिशायें
वक्ष प्रशस्त हुआ, तो तन की
स्वर्ण नीर से धुली प्रभायें ।

[१६३]

दृढ़स्कंध प्राणथ प्रलम्ब भुज
पौरुष का आलेख लिये थे
और सरल कर-कुवलय संचित
नव भविष्य का राग किये थे ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६४]

मधु का यौवन, यौवन का मधु
देखो किसको कौन पुकारे
निखरा वह व्यक्तित्व कि जिस पर
रति रीझे मनसिज मन मारे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ३

[१]

राजैश्वर्यों की महिमायें
परिवेशों के पुलकित बन्धन
प्रस्तुत थे निज वश में करलें
वर्द्धमान का निरासंग मन।

[२]

विभवों ने जितने बल खाये
बढ़ निर्वेद गया उतना ही
जितनी धूप सुखों की फैली
चढ़ उत्क्लेद गया उतना ही।

[३]

पथिक बन्धु ! तुम जितने चंचल
उतना ही अस्थिर यह जग है
यद्यपि रूपों का आकर्षण
एक प्रलोभन, दृष्टि-सुभग है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

तत्त्वज्ञाता इस मायावी
आकर्षण के हाथ न आता
लक्ष्य दृष्टि में बँध जाये तो
विचलित मोह नहीं कर पाता।

[५]

विमल राजप्रासाद सरोवर
ऊँचे थे प्राचीरों के तट
कूल-विहग, उद्दाम प्रलोभन
हंस विहरती गतियों के पट।

[६]

वीचि-विलास तरल रूपसियाँ
घन शैवाल लहरते कुन्तल
वारि जीव बहु भोग, विभव-भव
वारि विशद वैभव का अंचल।

[७]

गीत-ध्वनि कलरव कूलों का
जन बुदबुद अभिलाष तरलता
चपल दृगों की रंजित चितवन
चरण चरण अभिनव उत्पलता।

[८]

थे उद्यान भवन में ऐसे
सर में जैसे शरद-घटायें
शोभा पर शोभा की मुद्रा
दर्पण में बिम्बित छायायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६]

वर्द्धमान इस मधु विभूति को
ले न सके मन के अंचल में
अपना रूप विमलता अपनी
निश्चल रहे जलज से जल में।

[१०]

दूरागत मारुत वत आतीं—
जन-जीवन की विषम कथायें
कम्पित हो जाती थीं बहुधा
जीवन की कल्पित प्रतिमायें।

[११]

जिनका रूप सुगढ़ करने में
कभी कभी एकान्त-उपासी
ध्यानावस्थित हो कहते थे
मन से मन की विपुल व्यथा सी।

[१२]

'जो करुणा जीवन, करुणा वह
जन-मानस में ऐसी सोई
हिम, आतप, जलधार, प्रभंजन
जगा न पाता उसको कोई।

[१३]

जन सत्ता सब एक, खड़ी क्यों—
भय, विभेद-मति की दीवारें
क्यों उठती हैं जन-समाज से
असन्तोष की प्रबल पुकारें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

प्रेम, विनय, सौहार्द्र, सरलता
सम्बन्धों में है न कहीं भी
वाणी विश्वासों के मन दृढ़
अनुबन्धों में हैं न कहीं भी'।

[१५]

कभी हृदय व्याकुल हो जाता
देख धर्म का प्रचलित शासन
क्रिया-काण्ड का छल, जीवन की
सुविधाओं का वह्नि-विसर्जन।

[१६]

'थीं न व्यक्ति के जन-चिन्तन की
शेष कहीं उन्मुक्त दिशायें
अर्थ-व्यवस्था राजनीति की
रहीं स्वतंत्र न कुछ सत्तायें।

[१७]

जहाँ व्यवस्था यह उस भू पर
किसी स्वर्ग की बात मृषा है
एक ओर अमृत-घट रक्खे
एक ओर उद्दाम तृषा है।

[१८]

मिथ्या भौतिक विषयों के प्रति
ऐश्वर्यों की अति तत्परता
बिके हुये हैं निस्पृह लोचन,
मन मधुमत, मांसल सुन्दरता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९]

आत्मा का सत्कार नहीं है
वस्तु मात्र नारी है जैसे
वह अर्द्धांग-स्वामिनी है यह
स्वीकारा जाये तो कैसे' ?

[२०]

था सर्वत्र जहाँ भी देखा
कष्ट विषमताओं का मेला
जिसका सर्वविदित कारण था
वर्ग - भेद - व्यवहार अकेला ।

[२१]

कोई दुखी सुखी था कोई
कुछ थे धनी और कुछ निर्धन
किस सीमा तक भ्रष्ट हुआ था
जन-कृत सामाजिक-संयोजन ।

[२२]

प्रेम नहीं था दया नहीं थी
था अनुदार समय कुछ इतना
साधारण जन सब सहता था
महाश्चर्य सहता था कितना !

[२३]

दुखी उपेक्षित जन-जीवन ने
वर्द्धमान का मन झकझोरा
उसने कहा, "हमारे सम्मुख
धर्म-पृष्ठ है कागज कोरा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

कुछ पीड़ित हैं तिरस्कार से
कुछ के हित हैं स्वतः सुरक्षित
कुछ अधिकार जन्म से लाये
कुछ उसके अर्जन से वंचित।

[२५]

उत्पीड़न, शोषण, आलंभन
जीव-विगर्हण, यह सब क्या है
यदि परात्म-सुख बन न सका तो
सारा ब्रह्मवाद मिथ्या है।

[२६]

वह समृद्धि सार्थक विन विनिमय
जो अभाव का मन भर पाये
जलधर की संस्तुति ही क्या है
यदि न धरा की प्यास बुझाये।

[२७]

धर्म, समाज, वर्ण सम्बन्धी
वही व्यवस्था सर्व-सुवह है
जिसमें पद, उपभोग, प्रगति का
सर्व-सुलभ अवसर अहरह है।

[२८]

राजभवन, पर्णोटज, निर्जन
मधुबन हो अथवा हो मरुथल
सर हो सरिता हो सागर हो
समदर्शी रहता वर्षा-जल।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

लघु महान का भेद कहाँ है
सम है सरल विधान प्रकृति का
संध्या और प्रभातों का क्रम
निर्विकार नियमन संसृति का।

[३०]

मानव रचित विधानों में ही
कुछ है आज और कुछ कल है
यह अपूर्णता और अनिश्चय—
का, ही एक प्रमाण प्रबल है"।

[३१]

कह न रहा था कोई फिर भी
रहे देर तक सब कुछ सुनते
चिन्ता, व्यथा, प्रेरणा धृति से
निज कर्त्तव्यों का पथ चुनते।

[३२]

"यह अपूर्णता और अनिश्चय
निश्चय अपराजेय नहीं है
स्वार्थ-प्रगति, पल भर का सुख हो
किन्तु अन्नतः श्रेय नहीं है।

[३३]

प्राणिमात्र का श्रेय प्राप्त हो
यदि मैं कुछ भी ऐसा कर लूँ
तो इस शून्य विषम जीवन की
कटुताओं का कल्मष हर लूँ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

यद्यपि इस पावन पृथिवी पर
समरसता है सुख अशेष है
किसी सत्य की अभिगति के बिन
प्राणिमात्र को कठिन क्लेष है।

[३५]

जीवन-ध्येय महान कहीं यदि
तो वह जीवन ध्येय यही है
और यही वह सुख है शाश्वत
जिसका कुछ विनिमेय नहीं है"।

[३६]

क्षत्रिय, नृपकुमार, कुलभूषण
मन ने कहा, "उठो निर्भय हो"
धूल गये बन वसुधा वैभव
जीव-दया-निश्चय की जय हो।

[३७]

नृप सिद्धार्थ विमन से रहते
'कुछ प्रतिकूल समय की गति है
वर्द्धमान के मन में लक्षित—
होती, एक विचित्र विरति है।

[३८]

रूप, विभव साम्राज्य-सिद्धि का
मानों कोई अर्थ नहीं है
कोई भी भौतिक आकर्षण—
लगता रंच समर्थ नहीं है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

है अनुमान विवेक सभी कुछ
डूबा डूबा सा विस्मय में
कौन नियति से खेल रहा है
राज-पुत्र के सरल हृदय में।

[४०]

इस विरक्ति के निराकरण का
कोई यत्न नहीं यदि संभव
तो देखेगा यह जीवन का—
अर्जन, अपना आप पराभव।

[४१]

यह तटस्थता यह सूनापन
मधु-जीवन-संकेत नहीं है
है अनर्थ सूचक तिमिरोद्भव
यदि वह समयोपेत नहीं है'।

[४२]

कहा नृपति-ने; "देखो त्रिशले!
वर्द्धमान अब तरुण हुआ है
वह कौमार्य-सुभा का आनन
यौवन द्युति से अरुण हुआ है।

[४३]

किसी सुवदना राजसुता के
पाणि-पद्म की कोमलता से
किसी रूप के मधु वसन्त की
प्राणमयी प्रिय प्रांजलता से।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

श्रद्धा से, शोभा से, सुख से
साहचर्य की मधु-छाया से
नवल प्रेरणा, जीवन-रति से
जीवन शक्ति, त्याग माया से— ।

[४५]

जो विश्वासों की धरती पर
पूत समर्पण, अमृत धारा
पलक-परिधि के नील गगन की
एकमात्र निश्चल ध्रुव तारा— ।

[४६]

कर संयुक्त दिया जाये तो
संभव है कुछ नव्य दिशायें
दृष्टि-पंथ में आकर करदें
नष्ट सकल उठती बाधायें ।

[४७]

राजकार्य में दत्त-चित्त हो
यह अपना साम्राज्य सम्हाले
आशाओं की चिर विभूति का—
रूप, स्वकल्प-मूर्ति में ढाले ।

[४८]

चढ़े शीश पर दिग्भागों के
वैशाली के ध्वज की छाया
कण्ठ कण्ठ युग युग का गाये
यश सिद्धार्थ-तनय का पाया" ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४६]

त्रिशला को सिद्धार्थ भूप का
यह प्रस्ताव समयकृत इतना—
सुखकर लगा, किसी यात्री को
तप में निर्झर का स्वर जितना।

[५०]

"कहा आपने जैसा नृप वर!
सत्य, यही है इच्छा मेरी
जो शुभ है सुन्दर है उसके
सम्पादन में हो क्यों देरी।

[५१]

मेरे मत से राजवंश की
रूपवती कोई भी कन्या
इस कुल के अनुरूप रहेगी
मनस्विनी, गुण-सिद्धि-अनन्या।

[५२]

करे पारिवारिक सुख अनुभव
निज दायित्वों का मन समझे
जो प्रतीक्षा में है उसकी
उस भविष्य की धड़कन समझे।

[५३]

मैं जननी हूँ वर्द्धमान की
पुत्र-बधू का मुख मैं देखूँ
तो उस पल के सुख में अपने
अखिल-सिद्ध सुख का सुख देखूँ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

थे कलिंग जनपद के शासक
लोक-विदित 'जितशत्रु' अरिंदम
जिनके आदर्शों का भव थी
वैशाली की सत्ता सक्षम।

[५५]

वे उस भू की विपुल-सिद्धि के
रहे प्रशंसक और पुजारी
उसकी ओर निरखते उनके
सद्भावों की दृष्टि न हारी।

[५६]

वर्द्धमान के मृदु स्वभाव की
रूप और मधुवय की सार्थक
बात चली तो, जन मन सुखकर
जा पहुँची कलिंग-मधुवन तक।

[५७]

लतिकाओं के यौवन विहँसे
लगीं फड़कने नव कलिकायें
हुआ पिकी का कण्ठ सुरीला
चहक उठीं शाकुन श्यामायें।

[५८]

खिले यूथिका—कुंजों के मन
बिखरीं बल्लरियों की अलकें
बहुत गंध-मदिरा से खेलीं
गईं उन्हीं की झुक-झुक पलकें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५६]

बालायें तो बालाये थीं
लगीं रास रचने प्रौढ़ायें
मस्तक पर जिनके ध्रुव अंकित
पावों से थीं बँधी शिलायें।

[६०]

सहज मयूर-प्रियाओं ने भी
विह्वलता से शीश उठाये
शत-वर्षी दूर्वाओं के थे
धन शाद्वल अंचल लहराये।

[६१]

थीं जितशत्रु-सुता की जितनीं
सखियाँ समस्वभाव समरुचि-वय
लगीं कल्पनाओं में लखने
एक एक का सुखमय परिणय।

[६२]

क्षण कलिंग भूपति ने अपने
मन-दर्पण में जिसे उतारा
उस दुहिता से कहा, "यशोदे !
तेरे सुख ने तुझे पुकारा।

[६३]

वह जिसका सत्ताधिप होगा
सम्राज्ञी तू वैशाली की
तेरे मधुवन में उत्सव हो
कली खिले डाली डाली की"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

रहे कल्पनाओं से जितरिपु
अपने मन की गोद सजाये
निखरी वर्द्धमान की मुख-छवि
दिवस अनागत के मुस्काये।

[६५]

इस भावोदय को आभा दी
कुछ भावों ने और सुहानी
जैसे कंचन की प्रतिमा पर
और चढ़े कंचन का पानी।

[६६]

यह कलिंग प्रस्ताव गया जब
कुण्डनपुर के राज भवन में
त्रिशला को सुख मिला प्रहर्षित
होते क्यों सिद्धार्थ न मन में।

[६७]

थे प्रस्ताव कई परिणय के
यह प्रस्ताव किन्तु था उत्तम
नृप दम्पति ने कहा परस्पर
इस पर शीघ्र विचार करें हम।

[६८]

वर्द्धमान ने स्वयं सुना जब
जनक और जननी का निश्चय
कह न सके सहसा कुछ पल भर
रहे किसी द्विविधा में तन्मय।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

कुछ विलम्ब पश्चात विनय से
वर्द्धमान साहस से बोले
"माँ ! मेरा मन सुखी न होगा
इस विवाह की विपदा को ले"।

[७०]

माँ ने कहा, "कलिंगाधिप की
राजसुता है, अन्य नहीं है
सुना देव-बालाओं में भी
उसका सा सौन्दर्य नहीं है।

[७१]

सरल सौम्य मृदु मधुर मनोज्ञा
रूपवती सुविदित कुल-शीला
तेरे मन में कौन बसा है
कुछ विचित्र है तेरी लीला"।

[७२]

"राजसुता में कोई त्रुटि है
माँ ! मेरा यह भाव नहीं है
मुझे रूप-विभवों के सुख से
किंचिन्मात्र लगाव नहीं है।

[७३]

साधारण जन की दुहिता हो
अथवा कोई राजकुमारी
मैं विवाह ही नहीं करूँगा
कह ले मुझको स्वेच्छाचारी"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

यह निश्चय सुन वर्द्धमान का
हिली धरा, अम्ब्रर झुक आया
लगी अस्त सी होने सहसा
चढ़ती धूप लहकती छाया।

[७५]

मैंने अपनी इस आशा को
प्राणों में वर्षों से पाला
उसके सम्मुख वर्द्धमान ने
दो पल में सब कुछ कह डाला।

[७६]

मेरा सुत अविनीत नहीं है
सौम्य, सरल है आज्ञाकारी
मेरा ही प्रारब्ध रहा कर
दुरभिसन्धि जीवन से भारी।

[७७]

एक भाव बोला यह लज्जा
कहा अपर ने यह बचपन है
इस सीमा तक तो त्रिशला का
गर्व धन्य, उल्लास गहन है।

[७८]

वर्द्धमान के सहज कथन का
किन्तु अर्थ इससे कुछ आगे—
निकला, तो क्या क्या न सहेंगे
कितना कब तक प्राण अभागे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

भावों के विप्लव में अस्थिर
आशंका-प्लावन में बहती
अधरों पर उतरी झंझायें
सहती भी तो माँ क्यों सहती ।

[८०]

एक नयन में ज्वाला लेकर
एक नयन में भरकर पानी
अपने सुत से त्रिशला बोली,
"तेरी निष्ठुरता पहचानी ।

[८१]

निःसंकोच बता दे मुझको
अपनी इच्छा अपना निर्णय
तेरे एक शब्द पर आश्रित
तेरे युग का दीप्त नवोदय" ।

[८२]

वर्द्धमान ने दिया प्रश्न का
निज जननी को वह ही उत्तर
किन्तु कथन-बल पूर्व अपेक्षा
और अधिक था दृढ़ से दृढ़तर ।

[८३]

राजभवन साम्राज्य विपुलता
मुझे नहीं यह कुछ भी भाता
इस विपन्न वसुधा में मेरा
अन्य किसी से भी है नाता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

राजभवन से बाहर कितने
भोले शिशु, पीड़ित नरनारी
उन सुविधाओं से भी वंचित
जिनके जन्म-सिद्ध अधिकारी।

[८५]

बन्दी बना न मुझको मेरी—
माँ !, इच्छा की दीवारों में
एक विहग क्या सुख पायेगा
दीप्त कनक कण-भण्डारों में"।

[८६]

"वर्द्धमान मैं देख रही हूँ
प्रथम बार ऐसा दुस्साहस
तेरे इस हठ से आयेगी
मेरे मधु वसन्त पर पावस"।

[८७]

"माँ ! तू क्षमा नहीं कर सकती
तूने मुझको क्या न दिया है
हर आग्रह के मन को रक्खा
अपराधों को क्षमा किया है।

[८८]

अब मैं बड़ा हुआ तो अन्तिम
एक और अपराध रहा कर
तू अपना मन देख, और वह
मार सके तो मारे पत्थर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

मैंने भी तो प्रथम बार ही
देखी तेरे दृग में ज्वाला
मैं सुपुत्र हूँ पी जाऊँगा
पड़ न जाये अधरों पर छाला।

[९०]

मेरा शीश चरण पर तेरे
माँ कुछ और मुझे कहना है
मुझे छोड़ दे इस जीवन में
जैसे भी मुझको रहना है"।

[९१]

इतना कहकर वर्द्धमान के
रिक्त कमल दृग-कोर गये भर
ठहर गये अधरों पर आते
और शब्द करुणा से धुलकर।

[९२]

सुत का निर्णय सुन त्रिशला के
नीरज नयन नीर भर लाये
जिसकी आशा टूट रही हो
वह सहृदय क्या रत्न लुटाये।

[९३]

बैठ गया अधिकार छोड़ हठ
ममता-वशीभूत थी रानी
लगा सहज पलकों में ठहरा
दृग में लख पानी को, पानी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९४]

"जितना कहा बहुत है बेटा !
और न कहना कुछ भी आगे
एक तुम्हारे मन का सुख ले
मैंने शत जीवन-सुख त्यागे।

[९५]

तुम कठोर हो तुम क्या समझो
माँ का मन, जननी की ममता
सुत के हित सर्वस्व-विसर्जन
यह केवल उसकी ही क्षमता।

[९६]

महाराज क्या इस निश्चय का
गुरु पाषण उठा पायेंगे
स्तंभित चकित, भीत से जड़ से
सुन कर सहसा रह जायेंगे।

[९७]

अतः तुम्हें जो कुछ कहना हो
उनसे कुछ विवेक से कहना
उनको भी चिन्ता ज्वाला में
अप्रत्याशित पड़े न दहना"।

[९८]

त्रिशला से सुन सुत का निश्चय
रह न सके सिद्धार्थ स्वविधि में
एक वेग नैराश्य-व्यथा का
लगा उमड़ने प्राण-परिधि में।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

वह बोले, "जो भी है हित है
मैं उससे संघर्ष करूँ क्या
जिसको अतुल स्नेह से पाला
उससे प्रकट अमर्ष करूँ क्या ?

[१००]

त्रिशले ! अब तो मेरे मन से
जाती मन की पीर न बाँधी
ऐसा लगता सभी दिशायें
छोड़ रहीं हैं वर्षा आँधी।

[१०१]

इस विवाह की स्वीकृति दी कुछ
श्रद्धा के आभासों ने ही
मैं क्या करूँ मुझे मारा है
यदि मेरे विश्वासों ने ही।

[१०२]

अब तो यह अस्वीकृति मेरी
लोक-वाद का विषय बनेगी
क्या जितशत्रु कहेंगे, कितनी
गहन अवज्ञा विनय लगेगी।

[१०३]

कुछ भी हो परिणाम प्रिये ! अब
मैं तो उससे कुछ न कहूँगा
उसकी इच्छाओं का अनुगत
सदा रहा हूँ सदा रहूँगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

अपनी सारी गतिविधियों का
एक केन्द्र वह, उससे विचलित
हम क्यों हों है लक्ष्य हमारा
सर्वोपरि जो भी उसका हित"।

[१०५]

दिवसत्रय-उपरान्त नृपति के
मन में कर्म-ज्योति सी झलकी
'वर्द्धमान कुछ भी उत्तर दे
रहे तृषा अवशेष न कल की।

[१०६]

अतः उसे सम्बोधित करना
निश्चय एक कर्म है मेरा
यद्यपि उससे बिना कहे ही
आहत, प्राण-मर्म है मेरा।

[१०७]

इसी कर्मबल के वश हो फिर
वर्द्धमान से भूपति बोले
आशा के अंधे आग्रह से
अधर विवशता जड़ ने खोले।

[१०८]

"वर्द्धमान हो पूर्ण युवा तुम
निश्चित परिणय को स्वीकृति दो
और प्रतिष्ठित अपने कुल की
परम्परा को आगे गति दो"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

वर्द्धमान ने आर्द्र विनय से
भेद कहा अपने निश्चय का
"पूज्य पिता ! मैं नहीं चाहता
इस जीवन में सुख परिणय का।

[११०]

मैं इस नश्वर तन के तप से
इस जीवन में सिद्ध अमरता—
करने का आकांक्षी, जिसमें
बड़ा विघ्न गार्हस्थ्य-अवरता।

[१११]

जन-कल्याण इष्ट है मेरा
मैं जग को आत्मा का स्वर दूँ
मुझे मुक्ति दें आप, सुमति दें
मैं घट घट अमृत से भर दूँ।

[११२]

परिणय का प्रस्ताव आपने
अभी अभी जो मुझे सुनाया
मैं उसके अनुकूल गमन में
कुछ भी सफल नहीं हो पाया।

[११३]

मैंने अँगीकार किया है
प्रव्रज्या की दीक्षा लेना
मेरे पूज्य पिता, निज सुत की
और न अधिक परीक्षा लेना"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

यह सुनकर सिद्धार्थ देर तक
बैठे रहे असंज्ञस्थिति में
जैसे सब व्यापारों के क्रम
हो म्रियमाण गये इस क्षिति में।

[११५]

स्वस्थ हुये तो कुछ कहने को
यत्न सहित अधरों को खोला
करुणा से अभिभूत हृदय ने
भाव चुने शब्दों को तोला।

[११६]

"वर्द्धमान मैं क्या सुनता हूँ
क्या कहते हो तुम अनजाने
है श्रुत वह अग्राह्य कि जिसको
मन न सजाये, बुद्धि न माने।

[११७]

यह वय मुखुर और प्रव्रज्या
बड़ी असंगति है इस क्रम में
कभी समय-सापेक्ष कार्य का
करना, उचित नहीं संभ्रम में।

[११८]

जब आयेगी जरा हमारे—
दृग, देखेंगे किसको गीले
यह संभव ही नहीं सहज ही
जीवन, जीवन का विष पीले।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११९]

सबने कहा कि राजा तुम हो
अखिल जयी हो, वैभव युत हो
मैंने तो केवल यह जाना
मैं हूँ पिता और तुम सुत हो।

[१२०]

सो अब तुम ये किस श्रद्धा से
करते प्रव्रज्या की बातें
क्यों उँड़ेलते हो जीवन की
राकाओं में घन बरसातें।

[१२१]

बहुत कठिन है अपने मुख से
मैं यह कह पाऊँ तुम जाओ
वर्द्धमान ! तुम को यह प्रिय है
तो अपना अभीष्ट तुम पाओ।

[१२२]

किन्तु अभी मेरे जीवन में
ज्वालाओं का वज्र न डालो
इस निश्चय अथवा आग्रह से
अभी न मेरे प्राण निकालो।

[१२३]

तुमने त्यागा तो इस जग में
शेष रहेगा कौन सहारा
पुत्र! प्राण! तुम से यह भिक्षा
माँग रहा है पिता तुम्हारा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

जब तक मेरे श्वासों का है
नभ समीर सौरभ से नाता
रहो दृगों के सम्मुख मेरे
मेरे सुख! तापों के त्राता।

[१२५]

जो भी हो जब तक मैं जीवित
मैं न तुम्हें यह करने दूँगा
मेरे पीछे तुम स्वतंत्र हो
कुछ कहने को मैं न रहूँगा"।

[१२६]

त्रिशला यह सब सुनती स्तंभित
रही नीर से नयन भिगोती
हों प्रस्फुटित न अंकुर जिनसे
मरु भू में वह मुक्ता बोती।

[१२७]

घन कण्ठावरोध में बोली
"इन भुज-बन्धों का सुख देखो
छोड़ दूर आये हो जो दिन
होकर उनके सम्मुख देखो"।

[१२८]

कहा भूप ने "वर्द्धमान की—
माँ ! न नियति से तुम टकराओ
हट न शिला-अवरोध सकेगा
चाहे जितने अश्रु बहाओ"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२९]

दुखी पिता के इन शब्दों से
वर्द्धमान के नयन गये भर
और बना करते ही उनको
उस इच्छा का सहज समादर।

[१३०]

"बोले पूज्य पिता ! मुझ को दो—
साहस मैं संकल्प न तोड़ूँ
और आपके आग्रह को भी
जैसे बने अपूर्ण न छोड़ूँ"।

[१३१]

प्रवज्या का काल गया टल
किन्तु लोक-चिन्ता सुस्थिर थी
कैसे होती द्रवित नियति जो
सब श्रव्यों के हेतु बधिर थी।

[१३२]

अन्तः पुर उद्यान-निकुंजों
के उल्लास-कुसुम मुरझाये
पावस-स्नात द्रुमों पर पढ़ने
'पी' 'पी' फिर न पपीहे आये।

[१३३]

वह परिणय की बात अपरिणत
मन न खिले उत्साह न सरसे
एक घटा थी एक दिशा से
उठी और बिखरी बिन बरसे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३४]

त्रिशला या सिद्धार्थ किसी के
व्यवहारों में हुआ न अन्तर
उस विवाह की अवहेंला का
दुख था यद्यपि अति ही दुस्तर।

[१३५]

भीरु, विरागी, त्यागी, निर्बल
छल है स्वाभाविक गति-रोधन
विविध स्वरों, बहुविध रूपों में
चलता रहा परोक्ष प्रबोधन।

[१३६]

श्रवणों से वाणी-व्यंग्यों का
रस पीते, अविकल अपराजित
चिन्तन के शिखरों तक की गति
किये हृदय में रहे समाहित।

[१३७]

वाणी, मोह, विनय या करुणा
हुई न सार्थक क्षमता कोई
जगा सका सांसारिक सुख के—
प्रति, रति राग न ममता कोई।

[१३८]

जीवन का वह सहस सुमन-युग
सागर सा लहराता यौवन
सिन्दूरी आभा से भास्वर
नव विहान-सुषमा सा वह तन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३९]

वर्द्धमान का मन न सकीं छू
आकर्षण की तरल तरंगें
लिये कहीं अन्यत्र जा रहीं—
थीं, संयम में सधी उमंगें।

[१४०]

एक दिवस प्रासाद-कक्ष में
वर्द्धमान जब चिन्तन रत थे
बाह्य-चेतना शून्य स्वयं में
सुव्यवस्थ सम्यक संयत थे ।

[१४१]

कुछ लोकान्तिक देव अनाशित
हुये उपस्थित उनके सम्मुख
और लगे कहने जीवों के
विविध विषमता जन्य विपुल दुख।

[१४२]

वे बोले, "हे देव ! आप तो
जग जीवों की निष्कृति के हित
दुख जड़ता हिंसा अनीति की
इस धरती पर हुये अवतरित।

[१४३]

आप तपश्चर्या में लय हो
सतत, अखिल कर्म-क्षय द्वारा
करें सिद्धिपद प्राप्त आप से
अनुनय केवल यही हमारा"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४४]

वर्द्धमान को इस प्रार्थना से
महा ध्येय की सुधि हो आई
जैसे अवचेतन में सोया
स्वप्न लगे लेने अँगड़ाई।

[१४५]

किया उन्होंने अनुभव दिक्‌दिक्
उठती अनगिन करुण पुकारें
दैन्य, अभाव, विषमता कटुता—
पीड़ित-कण्ठों की चीत्कारें।

[१४६]

युग-धर्माहत मानवता के
मौन हृदय की करुण कथायें
लगीं उन्हें मर्माहत करने
जन जीवन-गति की बाधायें।

[१४७]

'जन के प्रति मेरे कर्त्तव्यों—
का आग्रह, भी बहुत बड़ा है
इधर जनक जननी का मेरे—
सम्मुख, स्नेह अथाह खड़ा है।

[१४८]

अंचल-तुल्य पिता का मन जो
खाली होता है भरता है
निज सुत की प्रत्येक अवज्ञा
वह सस्नेह क्षमा करता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४९]

मेरे सदय जनक जननी यह
अविनय सहज क्षमा कर देंगे
और चलूँगा तो आशीषों—
के अमृत से मन भर देंगे।

[१५०]

जिस वसुधा के हित-निमित्त अब
बनना होगा त्याग धनी भी
उस वसुधा ही के तो जन हैं
मेरे जनक और जननी भी'।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ४

[१]

खुला क्षितिज प्राची के नभ ने
नव-विहान-वेला की लाली
फैलाकर, मानों अंचल के
घूंघट में रख ली वैशाली।

[२]

नव विहंग चंचल चितवन वत
लगे नीड़-पलकों में फिरने
और कल्पनाओं से जन मन
भाव-गगन का सागर तिरने।

[३]

चढ़ीं चढ़ीं नव अरुणाभायें
वन उपवन गृह द्वार पथों पर
देख रहीं थीं आतीं परियाँ
आलोकों की रश्मि-रथों पर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

सूर्य-करों का दान कहीं भी
कोई दीन अदीन न छूटा
धरती के कण कण ने मन से
सहज स्वर्ग का कंचन लूटा।

[५]

अम्बर से छन छन कर फैली
दूर दूर विद्रुम अरुणाई
दिशा-वधू के भाल-विन्दु सा
दिया दीप्त रवि विम्ब दिखाई।

[६]

हिले निकुंजों में लतिकांचल
लगीं कमल कलिकायें खिलने
जाने क्या क्या कहा निशा के
मधु-स्वप्नों से मलयानिल ने।

[७]

रेणु-सेज पर अँगड़ाई के
भुजपाशों में वँध बँध जातीं
रहीं दुकूलों में सरितायें
मन ही मन सिन्दूर सजातीं।

[८]

कुण्डनपुर के उद्यानों का
यह प्रभात था रूठा रूठा
गंध परागों का रूपों का
जो भी था वैभव था झूठा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

खिसक गया मानों नीलाम्बर
थी उदास प्राची की लाली
ऐसा लगता अरुणोदय पर
झूल रही हो छाया काली ।

[१०]

स्वर था एक सभी विहगों का
बात एक ही फिर फिर चलती
वह प्रभात ही क्या हो जिसकी
संध्या पीड़ाओं में ढलती ।

[११]

अश्रु न जिसकी पलकों पर हो
ऐसा सुमन नहीं था कोई
कली कली खिलने से पहले
शायद बहुत रात भर रोई ।

[१२]

गये निकल ही साथ समय के
निशा दिवस जाने अनजाने
वर्द्धमान ने देखे ही थे
अट्ठाइस मधुमास सुहाने ।

[१३]

बात समय ने कह ही डाली
सारी उनसे जो थी कहनी
ममता से जो पथ रोके थे
छोड़े जनक न छोड़ी जननी ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

तभी अडिग हो घोषित कर ही
दिया एक दिन प्रव्रज्या का
जिसे छूटना ही है वह शर
कर पकड़े कब तक त्रज्या का।

[१५]

सम्बन्धों ने, प्रेम, विनय ने
कितना ही उनको समझाया
एक पुत्र के रूप, राज्य के
दायित्वों का मोह दिखाया।

[१६]

अवसादों से सिक्त, हठीले
वर्द्धमान ने एक न मानी
रही अधूरी राज भवन के
ऐश्वर्यों की सरस कहानी।

[१७]

यायावर ! यह भूल नियति की
या यौवन का त्याग हठीला
वैशाली की मधुर कथा का
पृष्ठ हुआ करुणा से गीला।

[१८]

"वर्द्धमान प्रव्रज्या लेंगे—
आज", एक जनरोर भवन को
भरने लगा क्षितिज से उठती
झंझा सा वन वीथि विजन को।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९]

कुछ दिन पहले घोषित तिथि की
होती गई प्रतीक्षा भारी
सूर्योदय के साथ गृहों से
निकले तप्त हृदय नर नारी।

[२०]

गली राजपथ जन-स्थलों में
प्रवहमान सा जन-सागर था
भू प्रकम्प के भय से जैसे
उद्वेलित सम्पूर्ण नगर था।

[२१]

वर्ण वेश परिधान-विधा में
विच्छृंखल थीं चंचल गतियां
छत छज्जों पर प्रमदायें थीं
और गवाक्षों में रूपसियां।

[२२]

सरभसता में विह्वलता थी
विह्वलता में पग पथ भूलीं
बाल युवतियां गृह द्वारों पर
म्लान हुई थीं फूलीं फूलीं।

[२३]

दौड़ रही थी कोई अपने-
केश पाश पृष्ठोपरि डाले
भुज-वल्लरियों पर, लहराते
उत्तरीय की सुभा सम्हाले।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

दोष काल को देती वृद्धा
बाला द्रोह जगत से करती
रही बाल-जिज्ञासाओं की
झोली कौतूहल से भरती।

[२५]

लगा किसी को जैसे उसका
दूर जा रहा हो प्रिय कोई
और किसी की निस्पृह ममता
मन में बैठी, मन में रोई।

[२६]

गंध सुमन से, राका से शशि
जलनिधि से अमृत घट जैसे
खींच रहा था कोई निष्ठुर
मध्य धार-गत से तट जैसे।

[२७]

माताओं के अश्रु चले ढल
बहिनों की आशायें टूटीं
और पत्नियों से चिर कल्पित
विश्वासों की बाहें छूटीं।

[२८]

कोई कहती नृप-सुत के ही
साथ प्राण भी यदि जा पाते
इस पल के अनुताप सघन को
सरल शान्ति के युग मिल जाते।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

एक शब्द ही त्याग मात्र था
वर्द्धमान की गति का लेखा
किन्तु नगर नारी ने उसको
कितने ही रूपों में देखा।

[३०]

स्थान स्थान पर पुरुष-वृन्द थे
गतिमय बात यथा रुचि करते
श्रान्त, कल्पना के शृंगों पर
हुये न चढ़ते और उतरते।

[३१]

बना नहीं कुछ कहते जिससे
रहा मौन ही मन में सहता
कोई अपने सहगामी से
साधिकार साग्रह था कहता।

[३२]

"नृप कुमार से कर न सकेगी
श्रुद्धाशयता कुछ मन मानी
सिन्धु सिन्धु है कूल तोड़कर
बहता है पल्वल का पानी।

[३३]

ज्वार भावनाओं का जन की
रोक यदपि प्राचीर न पाते
तट के पार तरंगों के मन—
जाते, किन्तु लौट कर आते"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

कोई कहता 'नृप-कुमार पर
किया प्रबल भावी ने शासन
गया तीर जो, गया भले ही
दोषी कर हो या कि शरासन" ।

[३५]

कोई कहता "वैशाली का
सूर्य ढला, अभिलाषा टूटी
और अनागत के हाथों से—
सिद्धि राजसत्ता की छूटी" ।

[३६]

भाव किसी का था, "नृपसुत ने
दायित्वों से खेल किया है
मन्थन के भय से तज अमृत
सुगम पंथ का वारि पिया है ।

[३७]

राजसुधा की बात अलग है
और अलग सरिता का पानी
संघर्षों का जीवन, जीवन
क्या तटस्थ की रुचि क्या वाणी" ।

[३८]

तर्क वितर्कों के रूपों की
गढ़ी जा रहीं थीं प्रतिमायें
किन्तु सत्य की चोट पड़े विन
कैसे प्राण प्रतिष्ठा पायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

समाचार आलोक-लहर सा
राज्य राज्य-सीमा से आगे
पहुँच चुका था, उस दिन गृह के
अपने कार्य सभी ने त्यागे।

[४०]

कुण्डनपुर को लिये लक्ष्य में
चले वाजि, गज, रथ बहु वाहन
उत्सुक, चकित, व्याधिधृत, व्याकुल
निकला नगर ग्राम से जन जन।

[४१]

भरीं चतुर्दिक थीं कुछ ऐसी
जन-गतियों से वन-लेखायें
महासिन्धु से मिलने जैसे
उमड़ीं पावस की सरितायें।

[४२]

प्रथम प्रहर दिन चढ़ते चढ़ते
कुण्डनपुर की भूमि गई भर
रुके सहस्रों व्यक्ति खड़े थे
पंक्ति-बद्ध यात्रा के पथ पर।

[४३]

था औत्सुक्य तरल सा मन मन
महाश्चर्य की थाह नहीं थीं
जिसके पावँ जहाँ पर ठहरे
उसके आगे राह नहीं थी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

राज-मार्ग जो जन्मोत्सव पर
गया उशीरगंध से धोया
वर्ष पक्ष वसु बाद प्रजा ने
नयन-नीर से उसे भिगोया।

[४५]

सद्भावों के सुमन बिछाये
कर दी आशीषों की छाया
लगे न धूप न मेंघ भिगोयें
छू न सके मारुत की माया।

[४६]

एक ओर आशा थी, पथ जो
वर्द्धमान ने ग्रहण किया है
त्याग राज-वैभव के सब सुख
यौवन में सन्यास लिया है—

[४७]

यही लोक-मंगल का पथ है
समता शान्ति अभीष्ट सुदाता
असामान्य जन ही होता है
कालाहत-मानव का त्राता।

[४८]

जो समर्थ सामन्त धनी थे
थे विस्मय-अभिभूत अकारण
यह संकल्प दृष्टि में उनकी
राज-धर्म का था अपवारण।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४६]

जो थे निम्न दलित निर्धन थे
उन्हें यही सन्तोष बड़ा था
जन-दुख-दव अधरों पर रखने
कोई कृत-संकल्प खड़ा था।

[५०]

थी विचार धारा कोई भी—
ऐसी न, जो प्रवाह नहीं थी
गर्व हर्ष करुणा कौतूहल
कहीं किसी की थाह नहीं थी।

[५१]

कोई भाव-कूल पकड़े था
कोई था धारा में बहता
डूब गया था कोई, कैसे
अन्य किसी का आश्रय गहता।

[५२]

चरणांगुलियों पर चढ़ कुछ जन
राज द्वार को देख रहे थे
बाल-सुलभ हठ आतुरता का
कुछ संयम से हाथ गहे थे।

[५३]

अप्रतिहत जन-वेग विपुल को
किये उपेक्ष्य अनाकुल कोई
जन-झंझा से दूर खड़ा था
भाव-वशीकृत पांसुल कोई।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

पारिजात से मुक्त मधुव्रत
प्रात क्षितिज से रवि तेजोमय
शुक्ति-बदन से निर्मल मुक्ता
गहन गुहा से मृगपति निर्भय ।

[५५]

अश्रु नयन से, वीणा से स्वर
अर्थ शब्द से, मणि विषधर से
भू से स्रोत, घटा से सुरधनु
निकले ज्यों प्रतिमा प्रस्तर से ।

[५६]

निकल राज गृह की सीमा से
वर्द्धमान जब बाहर आये
देखा लाख दृगों से भू ने
अम्बर ने प्रसून बरसाये ।

[५७]

सुमन दाम थीं हाथों हाथों
पथ में बिछी दृष्टियां सारी
जन जन को करते जाते थे
घन कृतार्थता का आभारी ।

[५८]

थे उत्साह-पवन पर बैठे
जय-निनाद, छू रहे दिशायें
लगा कि मानों अधरों पर आ
ठहर गईं सब की ममतायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५६]

जिसके पास पहुँचते उसकी
श्रद्धा शिर पर रख लेते थे
आने से पहले ही पथ में
दर्शक सुमन बिछा देते थे।

[६०]

थी, अनेक कण्ठों से आती
घन गंभीर जयध्वनि लहरी
हिला रही थी दिग्पालों को
ध्वनि से और प्रतिध्वनि गहरी।

[६१]

रंग सुरभि-स्नाता बालायें
बैठीं सौधों के कंचन में
लगती, हों उद्यान भूमियां
अधः विलम्बित मध्य गगन में।

[६२]

फेंक रहीं थीं सुमनांजलियां
वर्द्धमान पर निश्चल ऐसे
करतीं हों सत्कार धरा पर—
उतर देव-बालायें जैसे।

[६३]

जिससे मिल आगे बढ़ते वह
जन, उनकी पीछे चल देता
था प्रत्येक क्रमागत अनुगत
अन्य सहस्रों को बल देता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

होते होते हुआ समय से
जन-समूह अनुयायी सारा
यथा भगीरथ के पीछे हो
लहराती गंगा की धारा ।

[६५]

वर्द्धमान की जय, सन्मति की
जय हो, महावीर की जय हो
गूंज उठे भू अम्बर जाओ
पंथ तुम्हारा मंगलमय हो ।

[६६]

तोड़ भीड़ की पंक्ति-व्यवस्था
इसी समय आतुर जन कोई
वर्द्धमान की ओर बढ़ा, हो—
यथा बुद्धि धृति ऋजुता खोई ।

[६७]

कौतूहलमय जिज्ञासा से
सहसा दौड़ पड़े कितने ही
एक अनिश्चित आशंका से
मन में, मौन लड़े कितने ही ।

[६८]

"यह हरिकेशी दौड़ रहा है
किसकी ओर कहां द्रुत गति से
तोड़ी अनुशासन की सीमा
अकस्मात किसकी सम्मति से ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

पकड़ो पकड़ो रोको रोको
यह अछूत है परम हेय है
वर्द्धमान को छाया से भी
छू पाया तो नष्ट ध्येय है"।

[७०]

एक ओर अनियन्त्रित जनरव
लगा उचित अनुचित सब कहने
भाव-विसुध उस हरिकेशी को
पड़ा न जानें क्या क्या सहने ?

[७१]

गहने लगा बाहु कर कोई
पकड़ लिया परिधान किसी ने
खड़े हो गये पंथ रोक कुछ
किया दण्ड-संधान किसी ने।

[७२]

किसी व्यक्ति को इस घटना में
धर्म-अवज्ञा पड़ी दिखाई
इतना धृष्ट स्वयं हरिकेशी
अथवा यह प्रेरणा पराई।

[७३]

वर्द्धमान ने अपनें पथ में
देखी एक असंयत हलचल
दुखी हुए, 'यह धर्म-विधीकृत
सामाजिकता का कितना छल'।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

बोले, "रोको मत, आने दो
इसने क्या अपराध किया है
जीवन के अधिकारों को क्यों
श्रेष्ठ ! आपने गरल दिया है" ।

[७५]

वर्द्धमान का आमंत्रण था
था प्रतिरोध न कोई संभव
खुले नयन जो रहे खुले ही
हुआ शान्त आवेशों कार व ।

[७६]

पगतल गिरते दीन वृद्ध को
वर्द्धमान ने स्वयं उठाया
सहज भाव से चिरात्मीयवत
उसे देर तक कण्ठ लगाया ।

[७७]

लिया श्वपच को भुज पाशों में
गईं दिवस बन, काली रातें
यह विचित्र घटना उस युग की
जितने मुख उतनी ही बातें ।

[७८]

भ्रू आरोहण, दृग की लाली
बल ललाट के कौन न सहता
इस अवसर पर वर्द्धमान से
कोई कहता, कैसे कहता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७६]

रहे देखते धर्म-धुरंधर
रहे देखते नृप, नृपवेशी
चिर कृतार्थता का सुख लेकर
लौटा तो लौटा हरिकेशी।

[८०]

दिवस वर्ष युग कल्प करेंगे
इस साहस की सदा समीक्षा
अवसर ने की किसके सम्मुख
वर्द्धमान की प्रथम परीक्षा।

[८]

देवजनों ने लिया ग्रहण कर
अखिल अनागत का संरक्षण
राजपंथ का अन्त हुआ तो
उतरा एक अलंकृत प्रवहण।

[८२]

वर्द्धमान उस 'चन्द्र प्रभा' पर
समारूढ़ निर्लिप्त दिये चल
खींच रहा था आगे कोई
निश्चित लक्ष्य-प्रेरणा का बल।

[८३]

कतिपय योजन कुण्डनपुर से
दूर एक था गहन 'खण्डवन'
किया ग्रहण देव-प्रवहण ने
उसी विपिन का अन्तिक अध्वन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

तन मन का अभिषेक किये से
छोड़ तरंगाकुल जन श्रेणी
पीछे हर्ष गर्व करुणा की
वह अथाह विक्षुब्ध त्रिवेणी।

[८५]

अप्रयुक्त वनपंथ अगढ़ पर
प्रवहण-वाहक खिन्न नहीं थे
सुखस्पर्श सूर्यांशु, शीत के
मृदु उष्मा से भिन्न नहीं थे।

[८६]

सारस-युग्मों की मन्द्र-ध्वनि
मध्यान्तर दे दे कर आती
कभी कभी वक-पंक्ति गगन में
वन में वन-लेखा सी जाती।

[८७]

लगता था निज अंचल साधे
विजन वर्त्म, कासार कहीं है
सुख-उमंग, उस मुक्त प्रगति का
निश्चय ही आधार कही है।

[८८]

विरल वृक्ष-छाया-असमन्वित
कुश काशों में भू थी खोई
धूप ओढ़ निस्वन मारुत में
कहीं धूल थी सोई सोई।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

कभी दूर तक किसी विहग का
शब्द न था श्रवणों में आता
गहन शून्यता का अनुगत भय
अभय पथिक को आंख दिखाता।

[९०]

शमी शिशुंपा व्यूह कहीं पर
और कहीं शाल्मली अकेला
आतप वर्षा हिम के कितने
वर्षों से अविकृत हो खेला।

[९१]

कहीं किसी पटपर पर मिलते
खड़े यूथ के यूथ मृगों के
मन के वशीकरण अविचंचल
आकर्षण अभिराम, दृगों के।

[९२]

अन्य पथों की भांति यहां भी
सहोद्यान आवास बने थे
साधे सजल कूप, छायायें
खड़े कहीं अश्वत्थ घने थे।

[९३]

हुआ दृष्टिगोचर अति विस्तृत
क्षितिज-स्पर्शी, तमस्तूप सा
धरा-गर्भ-उत्क्षिप्त धूम का—
नभ, नभ के नीचे अनूप सा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठहरा ठहरा पथ आगे का
लगा धूप छाया में तिरने
और अन्तत: उस मणिधर को
निगल लिया उस विपिन-तिमिर ने ।

[९५]

अर्क-कुलों के बसे गाँव से
सुगठ करीर, कनक छितराये
कहीं कोलियों के घन क्षुप थे
दीर्घ तृणों में अंग छिपाये ।

[९६]

शेल लकुच परिभद्र मधुद्रुम
यत्र तत्र कितने एकाकी
आमंत्रण सा उठ उठ देतीं
आदि सरणियाँ, वन-प्रभा की ।

[९७]

प्लक्ष, पलाश, सरल शोभांजन
भू पर पड़ी पीत-पुष्पायें
दूर दूर तक आर्द्र धरा पर
थीं हरिताभ अमल दूर्वायें ।

[९८]

तृण द्रुमों के गुल्म सहस्रों
लता सहोड़ों के दृढ़ बन्धन
कितने ही रूपों में नत हो
स्वागत सा करता था वह वन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

वीरुध व्यूहों वृक्ष-तलों में
शोध तपस्या-भू की करते
रहे विपिन के भू-खण्डों में
वर्द्धमान सायास विचरते ।

[१००]

अल्प-शाख वृक्षों पर फैली
गुंजाओं का सह आलिंगन
वितत वितानीकृत छाया की—
भू, पर था करता आवाहन ।

[१०१]

देते थे दुर्लंघ्य प्रलोभन
कहीं प्रशस्त खुले भू-अंचल
कभी पकड़ लेते थे मन को
धन न्यग्रोध, लहरते चलदल ।

[१०२]

थे कितने ही ऊंचे ऊंचे
यत्र तत्र उप भू पर छाये
सर्जक विटप समूह विपिन में
शीश गगन के मध्य उठाये ।

[१०३]

इन्ही समूहों में सर्वोपरि
एक विशाल साल ऋजुगामी
भू का गर्व, विपिन का प्रहरी
था समस्त तरुओं का स्वामी ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

उसी वृक्ष के तले सुदृढ़ थी
ज्ञान-पीठि सी शिला पुरातन
वर्द्धमान ने किया यहीं पर
जीवन - जगत - सत्य - प्रतिपादन ।

[१०५]

मार्गशीर्ष का दिवस गया ढल
शैल शिखर से वर्षा-जल सा
लगा सिमटने, आतप भू से
वृद्ध व्यक्ति के आशांचल सा ।

[१०६]

मन्द पवन शीत-स्पर्शों से
पल्लव लगे प्रकम्पित होने
अन्तिम प्रहर उतरता, दिन का
लगा क्षितिज-छाया में सोने ।

[१०७]

कहीं सपंक्ति कहीं यूथों में
लगे विहग नीड़ों को आने
तरु-शिखरों से गये गगन पर
चढ़ किरणों के मन दीवानें ।

[१०८]

लगीं निमग्न तिमिर में होने
दीर्घ पादपों की छायायें
डूब गईं वन के अन्तस की
गहराई में मौन दिशायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

थे क्षैतिज दीर्घा पर लटके
कनक रेणु के अंचल पीले
जो औदास्य छांह से लगते
तम-फुहार में होकर गीले।

[११०]

गगन कोर पर लगा चमकने
दूर दीप्त एकाकी तारा
सांझ सुन्दरी ने वेणी में
गूंथा एक कुसुम उजियारा।

[१११]

रही नीर सा, पीती आतप--
प्रातः से संध्या तक अवनी
पश्चिम-पवन-विधूत गया दिन
घन तुषार ले आई रजनी।

[११२]

यत्र तत्र भू-गृह गुल्मों से
लगे हिंस्र पशु वृन्द निकलने
वृक, शृंगाल, वन श्वानों के स्वर
तिमिर-सिन्धु से लगे उछलने।

[११३]

चारो ओर भयावह भारी
मौन, निरन्तर बोल रहा था
वह वन जैसे गहन भीषिका
के, गर्वित दृग खोल रहा था।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

वृक, वन-गज, जम्बूक विपिन में
लगे लगाने शत शत फेरी,
वहुविध कीट शलभ पुंजों के
उड़ते नैश पतत्रि अहेरी।

[११५]

कभी हिला देता था वन-भू
त्रस्त मयूरों का जलधर-रव
अनियंत्रित हो बोल रहे थे
पीन प्लवंग पिये तम-आसव।

[११६]

वल्मीकों से झांक रहे थे
दीर्घ सरीसृप शीश उठाये
शिला समीप न जाने कितने
विषमुख-जीव दृष्टि में आये।

[११७]

था वनराज न वन में कोई
लगता था, वनराज सभी थें
निर्जन वन में भय अशान्ति के
जितने संभव साज सभी थे।

[११८]

शिला निकट जाने अनजाने
वन्य-जन्तुओं का था मेला
था प्रत्येक नव्य कोलाहल
गत कोलाहल की अवहेला।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११९]

निराहार निर्जल, उस वन में
विगत हुये चिन्तन के दो दिन
रहे त्रास के तीर छूटते—
शून्य क्षितिज-कार्मुक से अनगिन ।

[१२०]

वर्द्धमान के दर्शनेच्छु जन
आये कितने ही उस वन में
नयन-तटों में स्नेह तरंगित
श्रद्धा का सागर था मन में ।

[१२१]

लिये लालसाओं में थे कुछ
प्रेम-भेंट, आतिथ्य-निमंत्रण
कुछ की इच्छाओं में उठते
बन में ही बस जाने के प्रण ।

[१२२]

वर्द्धमान का इस प्रकार तप
दो दिन हुये सभी को दुर्वह
लगा विनत शब्दों में बढ़ने
अन्य ग्रहण करने का आग्रह ।

[१२३]

करुणा, प्रेम, समाग्रह-सिंचित
जनसमूह का अविरत अनुनय
लगा शीश चरणों पर रखने
घनात्मीयता का हठ दुर्जय ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

बना नहीं कर सकें अनादर
ऐसे श्रद्धाभाव अतुल का
गृह जाकर आहार सुरुचि से
ग्रहण किया भूपाल वकुल का।

[१२५]

प्रत्यावर्तन पर दीक्षा ले—
उसी सालतरु-तल के वासी
वर्द्धमान उस शिलाखण्ड की
लेकर बैठे अंक उदासी।

[१२६]

समय चक्र फिर धीरे धीरे
लगा स्वगति में क्रम से चलने
बाधायें उस कठिन पंथ की
एक एक कर लगीं निकलने।

[१२७]

स्वजनों के आग्रह, आसंगों,
सम्बन्धों के बन्धन टूटे
इतना आगे बढे कि, आगे—
बढ़े, हुये सब पीछे छूटे।

[१२८]

यह उनका हित-भाव, विपिन के
कण कण पर थी जिसकी छाया
आया जोवन-जीव शिला तक
रक्षक, मित्र, शिष्य वत आया।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ५

[१]

बाधा विघ्नों से लड़ने की
दृढ़ संकल्प शक्ति देता है
सिद्धि वरण करती है उसका
जो जन प्रथम आत्मजेता है।

[२]

भीति भेद आसंग प्रलोभन
स्वार्थ कष्ट, यश, अपयश का भय
बढ़ते चरणों को देता है
कितनी बार विपद् का परिचय।

[३]

अडिग अचल ध्रुव और हिमालय
रहीं झोरतीं नभ-उल्कायें
आतीं जातीं रहीं धरा के
प्रांगण में शत-शत झंझायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

भूकम्पों से हिल हिल कर भू
रही केन्द्र पर अविकल अपने
लक्ष्य बसा जिस दृग में वह क्यों
देखें कर्म-विरति के सपने ।

[५]

वर्द्धमान उस शिला-पृष्ठ पर
लोक-विसुध चिन्तन में रत हो
बैठ गये भय त्याग समय का
नव्य सर्ग के हेतु स्वगत हो ।

[६]

निर्जन जीवन, गहन विपिन का
पशु पक्षी हिम आतप के भय
छू न सके निश्चिलता मन की
वन की विपदाओं के आश्रय ।

[७]

विजन गया बन राजभवन सा
शिला बनी कंचन सिंहासन
भूप-भृत्य, परिजन थे बनचर
शुभचिन्तक था एकाकीपन ।

[८]

सिंहासन पर चिन्ता होती
चिन्ता में होता सिंहासन
सिंहासन से चिन्ताओं से—
मुक्त यहां था जन-हित-चिन्तन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

यह अनुभव ही हुआ न मन को
काल गया बढ़ आगे कितना
एक स्वप्न था वाह्य जगत की
गतिविधियों का वैभव जितना।

[१०]

और स्वप्न भी ऐसा जिसकी
सुधि कोई अवशेष नहीं थी
जीवन में धड़कन धड़कन थी
तन या तन गति लेश नहीं थी।

[११]

अयस फलक सा तपता भूतल
पाँव नहीं रखते बनता था
कुंज, लता-गुल्मों से मानो
तप्त शिला का द्रव छनता था।

[१२]

गगन वमन करता ज्वालायें
विहग नहीं था उड़ता कोई
और पवन भी छोड़ लता तरु
नदी-कूल में छिप कर सोई।

[१३]

कहीं कहीं कोई एकाकी
पथिक पंथ में ही रुक जाता
और धूप की जलती चादर
को अंचल की छाँह बनाता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

कभी किसी जलपक्षी का स्वर
गहन शून्य में तिरता तिरता
किसी स्वस्थ चेतनता के चिर—
परिचय, सा श्रवणों में गिरता।

[१५]

सिमट गये विस्तार सरों के
बीचि-विलास तटों से छूटे
पिगला भू स्रोतों में आतप
छाया में भी प्रस्तर टूटे।

[१६]

हाँफ रहे थे सारमेय, मृग
महिष, व्याघ्र, वनगो, गोधायें
थीं मुख-विवर-वहिर्गत जिनकी
रसालीढ़ कम्पित जिह्वायें।

[१७]

मुड़ा गगन-पथ पर रवि का रथ
और लगी ढलने दोपहरी
हुई शून्यता अधः विलम्बित,
दिग्द्वारों पर पड़ कर गहरी।

[१८]

तप का आतप, आतप का तप
कर्मवीर कब किससे डरता
एक दिवस भर रहा गगन से
भू पर अग्नि चूर्ण सा झरता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६]
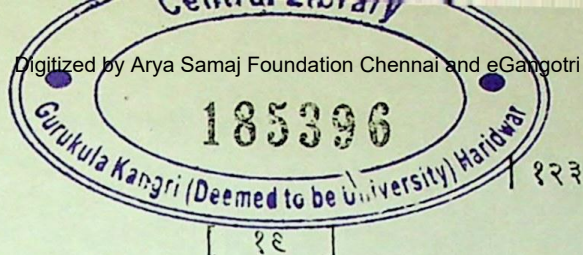
झुलसे दल, मुरझाये वीरुध
तप्त हुआ सर सरि का पानी
गये छांह के झीनांचल जल
पड़ी सांझ को आग बुझानी।

[२०]

और सांझ आई तो सहसा
मलिन उदीची के प्रान्तर से
उठा धूल की झंझा का रव,
प्रलय-पवन के वेग प्रखर से।

[२१]

जो दिग्ग्राम ताम्र थे उन पर
चढ़ने लगी धूल की छाया
मानों अस्तमुखी किरणों का
वह कंचन हो तिमिर नहाया।

[२२]

मौन जहां दृग खोल रहा था
भय ने ली उठकर अँगड़ाई
पत्नरोर अधिकृत - वनवसुधा
पवन-वेग में सम्हल न पाई।

[२३]

लगे दौड़ने शंकित बन पशु
यत्र तत्र, पथ पथदिक् भूले
लगे टूटने लतिकाओं के
पादप-बाहु-विलम्बित झूले।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

जटिल-शृंग-शिर मृग दौड़े तो
ऊलझ गये दृढ़ वल्लरियों से
लगे भयातुर गर्जन करने
वन-व्याघ्र निज निज दरियों से ।

[२५]

गज-यूथों के शुण्ड गगन पर
लगे फेंकने श्वासों के शर
भय से प्रेरित पग द्रुत गतियां
लगी धरा को होने दुर्भर ।

[२६]

अपराजेय वेग से बढ़ता—
चढ़ता, अश्रुत-पूर्व प्रभंजन
करने लगा खड़े एकाकी
वृक्षों का बल से उन्मूलन ।

[२७]

टूटे तरु, टूटे तरुओं से,
शाखाभग्न हुईं शाखायें
झंझा का रव झंझा का रज,
डूब गये भू गगन दिशायें

[२८]

त्रस्त जिजीविषु विहग विहग को
बैठा जो तृण भू में छिपकर
लगते थे पल पल कितने ही
कोलाहल - कष्टों के पत्थर ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

मृत्यु भीति, आतंक अनाश्रय
जड़ जंगम में सहज गये भर
द्रव्य गंध आकृति से विरहित
अखिल विपिन था, वेग बवण्डर।

[३०]

अर्द्ध प्रहर उपरान्त विपिन के
कुशाजाल तृणतरु क्षत विक्षत
शान्त धरा पर पड़े हुए थे
प्रलय-काव्य के जीर्ण पृष्ठवत।

[३१]

कुछ तो दृश्य, विधूनित भू के
करुणाद्रावक दृष्टि दुखद थे
वन्य मक्षिका-वृन्द विचुम्बित
मृत जीवों के पत्रच्छद थे।

[३२]

यत्र तत्र कितने ही पक्षी
भू से उठते गिर गिर जाते
पवन-शीर्ण पंखों पर अपने
तन का भार सम्हाल न पाते।

[३३]

वर्द्धमान ने दिवसोदय पर
देखा यह सब दृश्य भयंकर
विस्तृत नील गगन के नीचे
ध्वस्त लुटी वसुधा का परिकर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

एक प्रश्न था यह सब क्या है,
खेल प्रकृति का इतना भीषण
उत्तर था इस अखिल सृष्टि में
मुक्त नहीं इससे कोई क्षण ।

[३५]

है निसर्ग परिणाम सर्ग का
कहीं आज है और कहीं कल
देती रहती प्रकृति स्वयं ही
अनति और अतिगति को समतल ।

[३६]

वे विनाश, ऋतु व्याघातों से
हुये नहीं पल भर भी अस्थिर
होता रहा सतत चिन्तन की
द्युति से श्यान-विभा प्राणाजिर ।

[३७]

निर्जल तथा निरन्न दिनों से
क्षीण-कान्ति, थी दुर्बल काया
गहन साधना के सूने में
प्रथम सत्य यह उठकर आया ।

[३८]

'विमुख प्रकृत नियमों से होकर
निराहार तन का उत्पीड़न,
नहीं शुष्क पादप से संभव
किसी रूप अमृत अभिस्पन्दन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३६]

है आहार-विरति, निश्चय भ्रम
अन्न न तो, जीवन न चलेगा
यदि जीवन ही नहीं रहा तो
यह तप का तरु भी न फलेगा।

[४०]

मिथ्या, अस्वाभाविक हठ से
करना किसी सिद्धि की आशा
समझ नहीं पायेगा चिन्तन
परिणामों की अटपट भाषा।

[४१]

यह विचार, प्रत्यक्ष सिद्धि ने
जैसे कुछ संकेत किया हो
लगा उन्हें अज्ञात कहीं से
परामर्श शत वार दिया हो।

[४२]

जीव हेतु अनिवार्य रहा जो
ग्रहण अन्न, फल, जल पय करते
कभी कभी नगरों ग्रामों तक
थे नितान्त निर्लिप्त विचरते।

[४३]

कभी कभी चिन्तन रत कहते
मन से निज मन की चिन्तायें,
'क्या न समेटी जा सकती हैं
आवश्यकता की सीमाएँ'।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

वाह्य जगत रूपों से जितना
जन-सम्बन्ध सकाम बढ़ेगा
उतना उनके व्यापारों से
निजता का आयाम बढ़ेगा ।

[४५]

किये बिना सर्वस्व विसर्जित
बिना शून्य की स्थिति में आये
लगता जन-कल्याण असंभव
करे व्यक्ति जितना कर पाये ।

[४६]

शून्य-स्थिति का अर्थ वचन मन
और कर्म द्वारा जो अर्जित
निज निमित्त कुछ नहीं पूर्ण वह
प्राणिमात्र के हेतु समर्पित ।

[४७]

शून्य-स्थिति का भाव, जगत को
निज में रख निज से खो जाना
शून्य स्थिति का भाव, सिमट कर
सागर से सीकर हो जाना ।

[४८]

निज सर्वस्व-विसर्जन जैसे
सरिता का सागर में विलयन
निज निमित्त अस्तित्व मात्र पर—
जग निमित्त संचय, गति, जीवन" ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४६]

जगत शिला चिन्तन की छेनी
सुगढ़ मूर्ति जीवन के खनते
गये साधना-तप-ज्वाला में
कान्तिमान कंचन से बनते।

[५०]

'यक्ष'—दत्त मर्मान्ति व्यथा का
किया सहन दृढ़ता से गिरि बन
और कभी हो द्रवित, दृष्टि-विष,
'चण्ड-कौशि' का किया प्रबोधन।

[५१]

अन्तिम वस्त्र विप्र याचक को
परम हर्ष से दिया दान कर
स्वयं दिगम्बर तरु-तल बासी
अविकृत होकर रहे आयु भर।

[५२]

ग्राम, नगर, वन, तप की भू पर
वर्द्धमान को पल-पल छलतीं
रहीं विषमतायें जीवन की
साथ साथ जीवन के चलतीं।

[५३]

एक गोप निज वृषभ, वृक्ष से
बाँध गया उपशिला किसी दिन
और गया कह वर्द्धमान से
रहें देखते उन्हें महाजिन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

कुछ समयोपरान्त जब लौटा
वृषभ न मिले जहां पर छोड़े
क्रोधित हो उस मूर्ख गोप ने
विषमय कुटिल शब्द शर छोड़े।

[५५]

यत्र तत्र फिर वृषभान्वेषी
लौट निराश वहीं पर आया
वर्द्धमान के निकट पूर्ववत
उन वृषभों को बैठा पाया।

[५६]

समझ प्रवंचक वर्द्धमान को
लगा क्रोध से सहसा जलने
रहा प्रहार रज्जु से करता
दिया न साथ बुद्धि के बल ने।

[५७]

वर्द्धमान उस रूप गोप का
लख व्यवहार मौन मुस्काये
और क्षमा के शब्द उतर कर
निरपराध अधरों पर आये।

[५८]

उसी समय देवेन्द्र इन्द्र ने
बड़ी भर्त्सना की उस जन की
और कहा, "रे मूर्ख ! तपोधन—
इन्हें कहां सुधि तन की मन की।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

वैशाली के नृपकुमार यह
क्या वृषभों से इन्हें प्रयोजन
तू समवाय जगत की सारी—
जड़ताओं का, हेय अकिंचन"।

[६०]

यह सुन लज्जित भीत व्यक्ति ने
चरणों पर निज शीश दिया रख
बोला "मैं क्रोधांध, अल्प धी
सका न निज कृत कुमति कर्म लख।

[६१]

नृपति-पुत्र ! मैं अपराधी हूँ
कोई क्षमा न कोई मार्दव
माँग रहा हूं निज शठता का
कठिन दण्ड, जो भी हो संभव"।

[६२]

वर्द्धमान ने निज चरणों से
उठा गोप को कण्ठ लगाया
और कहा, "आचरण व्यक्ति का
है उसके अनुभव की छाया।

[६३]

यदि देखो, तो व्यवहारों में
क्रोध बहुत अविवेक बहुत है
जैसा जिसने भोगा उसका
कर्म स्वभाव उसी से युत है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

जो प्रिय है अपनी आत्मा का
वह विवेक है वही धर्म है
ग्रहण करो यदि कर पाओ तो
व्यवहारों का यही मर्म है" ।

[६५]

एक दिवस इस इच्छा के वश
लिया न अन्न किसी के घर का
'आज ग्रहण आहार करेंगे
किसी राज दुहिता के कर का' ।

[६६]

कई दिवस तक रहे विचरते
शिथिल हुआ संकल्प न मन का
रहा सतत अस्वीकृत होता
भाव भरा आग्रह जन जन का ।

[६७]

एक तिरोहित होती संध्या
दया-दीन मन कितना भावुक
किसी द्वार पर रोदन-स्वर सुन
सहसा बढ़ते पाँव गये रुक ।

[६८]

किसी त्यक्त-सर्वस्व हृदय में
जैसे समवेदना जगी हो
अथवा किसी सुमन को प्रातः—
पवन-बाण की चोट लगी हो ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

वर्द्धमान के कोमल मन ने
किया अकथ पीड़ा का अनुभव
किसी वधिक से त्रस्त गया बन—
आँसू, किसी विहग का कलरव।

[७०]

बन्धन-युक्त एक युवती थी
रा रो पड़ती कभी सिसकती
म्लान वसन लुंचित-घन-केशा
करुणा की काया सी लगती।

[७१]

सम्मुख रक्खी हुई देर से
एक तुच्छ भोजन की थाली
क्षुधा-त्रस्त भी क्षुधा समेटे—
बैठी, उस पर दृष्टि न डाली।

[७२]

वर्द्धमान को लख युवती ने
उन्हें किया निज भोजन अर्पित
जैसे उसके जन्म जन्म की
हुई पूर्ण आकांक्षा गर्वित।

[७३]

वर्द्धमान ने हेय भोज्य वह
किया यथेष्ट ग्रहण सुख माना
बहुत हुआ आश्चर्य उसी को
जिसने इस घटना को जाना।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

"नृपकुमार वह और तपस्वी
यह अज्ञात-शील-कुल दासी
कठिन क्षुधा का कष्ट, प्रतिज्ञा—
भूल गया भूखा बनवासी"।

[७५]

सुन विचित्र जनवाद कहा यह
वर्द्धमान ने, "मुझे ग्राह्य सब
जो जिसकी रुचि कहे किन्तु मैं
दृढ़, अपसृत संकल्प हुआ कब।

[७६]

जो दासी है आज कभी थी
वह चम्पा की राजकुमारी
भाग्य कली ऐसी मुरझाई
गई सूख जीवन की क्यारी"।

[७७]

कौशाम्बी नृप शतानीक ने
सबल नहीं था जिसका कारण
कर मैत्री-प्रस्ताव, तिरस्कृत
चम्पाधिप पर किया आक्रमण।

[७८]

दधिवाहन ने कितना चाहा
मेरे सम्मुख युद्ध न आये
और न नर-शोणित में मेरी
यह चम्पा की भूमि नहाये।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

किन्तु युद्ध ने आकर माना
शीश कटे तलवारें टूटीं
इस विनाश-झंझा के पीछे
कितनी करुण-कथायें छूटीं।

[८०]

लूटा विजयी सेनाओं ने
चम्पा नगरी को दिवसों तक
रत्न, रूप, जीवन, धन लेकर
लौटीं जब अभिलाष गये थक।

[८१]

इसी लूट में एक विजेता—
सैनिक, के कर आई रानी
जिसके साथ सुता थी उसकी
दृग में जसे दृग का पानी।

[८२]

रानी के मुख-छवि-सरसिज पर
ठहरे सैनिक के दृग-मधुकर
हटे न वारण, अपवारण के
अनुभावों से आहत, पलभर।

[८३]

वह संयम के कम्पित कर से
रही दबाये उर की धड़कन
क्रोध, ग्लानि, लज्जा का अनुभव
रहा गरल पीता परवश मन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

सहज सरल रानी ने पढ़ ली
सैनिक के भावों की भाषा
निज जीवन के साथ मिटा दी
उसके विकृति-वेग की आशा।

[८५]

रथ से कूद गिरी पृथिवी पर
इस प्रकार कुछ रथ के आगे
वेग-वशीकृत-वाजिखुरों से
आहत छूटे प्राण अभागे।

[८६]

राजसुता को ले हताश जब
वह सैनिक अपने घर आया
हँसकर बोली विषम व्यंग में
सैनिक से सैनिक की जाया।

[८७]

"कली कली प्रख्यात तुम्हारे
शौर्य-गर्व की आज खिली है
विजय वरण कर आने वाले
तुमको यह सम्पत्ति मिली है ?

[८८]

इस भोली कन्या को लेकर
अपने साथ नगर को जाओ
जो कुछ भी दे मूल्य, कहीं भी
कोई, इसे बेचकर आओ"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

विक्रय-हेतु पण्य-वीथी में
राजसुता को सैनिक लाया
और एक श्रेष्ठी को देकर
अपनी इच्छा का धन पाया।

[९०]

उस श्रेष्ठी ने राजसुता को
सवात्सल्य पुत्री सा पाला
कभी श्रेष्ठि-पत्नी को जैसे
लगा, दाल में है कुछ काला।

[९१]

क्योंकि एक दिन देखा उसने
श्रेष्ठी को, उसका क्या नाता
चन्दनबाला की अलकों के
था मध्या से वलय बनाता।

[९२]

लिया खींच इस भ्रम वश उसने
सारी सुविधाओं का अंचल
राजसुता के कटवा डाले
सुन्दर भ्रमर-श्याम, घन कुन्तल।

[९३]

और चन्दना को वन्दी वत
डाल दिया तममय तल गृह में
शशि ने कभी कलंक न देखा
जिस निर्दोष निपट निस्पृह में।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

वर्द्धमान ने जिसका अर्पित
तुच्छाहार सदय स्वीकारा
यही चन्दना थी वह जिसको
भाग्योदय ने यहां पुकारा।

[६५]

युद्ध, पिता की मृत्यु, अपहरण
और आत्म-हत्या जननी की
निज विक्रय, दासी का जीवन
कष्ट कथा प्रारब्ध-अनी की।

[६६]

रही चन्दना अपने मन में
एक एक यह सब कुछ गुनती
दुख, अन्याय, विषमता, जड़ता
भेदों का कोलाहल सुनती।

[६७]

लगा कि जैसे जीवन का रस
कर्दम का जल, जल-कर्दम है
उसमें मग्न जीव को अपने
सुख का इतना प्रबल अहम है!

[६८]

समझ चन्दना भोग, विभव के
भव के सभी सुखों को मिथ्या
बनी विरक्ता वर्द्धमान की
प्रथम समाहृत साध्वी शिष्या।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

इस घटना से नगर निवासी
चकित हुये सारे के सारे
धारा चक्रों में चिर अस्थिर
श्रद्धा को मिल गये सहारे।

[१००]

वर्द्धमान को माना सब ने
उतरी कोई शक्ति अलौकिक
गृह गृह जगी नवोदय के प्रति
आत्मार्पण - इच्छा अधिकाधिक।

[१०१]

दूर दूर तक तप्त मरुस्थल
पर, गहराये पावस के घन
आतप-हत चन्दन-लतिका को
आश्रय मिला, मिला नव-जीवन।

[१०२]

ईर्ष्या, अविश्वास, दर्पों की
हिम, रज-विपुल, वारि-झंझायें
बीते द्वादश वर्ष निरन्तर
सहते भूत - प्रकृति - बाधायें।

[१०३]

एक दिवस अपलक नयनों में
सहसा अगणित कमल गये खिल
जीवन जैसे नव-विहान था
स्वच्छ शान्त अरुणाभ अनाविल।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

मन-दर्पण पर धीरे धीरे
लोक-अलोक हुये प्रतिबिम्बित
प्रात रश्मि-अंचल पर जैसे
भू-अम्बर के अग जग अंकित।

[१०५]

अर्द्ध-निमीलित पलकों में थी
दूर क्षितिज तक सृष्टि दृगों की
नदी-कूल पर आती जाती—
कई श्रेणियां वन-विहगों की।

[१०६]

'एक तृषा है अमिट हृदय में
हिम - आतप - वर्षा - अपराजित
भटक रहा चैतन्य जगत का
जिसकी इच्छा से अनुशासित।

[१०७]

प्यास बुझे बिन जीवन का भय
हर भावी कल प्यासा होगा
जीवन की यह प्यास प्रबल रख—
पंखों पर, कितना सुख भोगा' ?

[१०८]

हर व्यापार प्रकृति का अगणित
सजग प्रेरणायें अविरल था
हर सम्बन्ध जगत का जैसे
सम्बन्धों का भ्रम था, छल था।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

मोह, लालसा, सुख-संचय के—
घनावरण से लगे सिमटने
परम सत्य अमृत वत् जैसे
लिया साध मानस के घट ने।

[११०]

तोड़ तिमिर की कारा निकले
जैसे अरुणोदय की वेला
अलस नयन में विद्युत भर दे
यथा रूप की रंजक हेला।

[१११]

श्याम-कूट से निर्झरिणी सी
उतरी हंस-धवल हिम रेखा
शनैः शनैः उस विपिन शून्य में
दूरागत प्रकाश सा देखा।

[११२]

शिशिर निशा में तप-तरंग सा
उष्मा-सरि सा, वह्नि-शिखा सा
अथवा कल आने वाला यश
गगन-पृष्ठ पर ज्योति-लिखा सा।

[११३]

पंक-परत सा तिमिर गया हट
विमल नीर सा जीवन-छलका
व्यवहारों के सत्य गये धुल
और हृदय था हलका हलका।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

वह प्रशस्त-पुलिना 'ऋजुकूला'
अल्प-जला, अति मन्थर गति थी
किसी मरुस्थल में लगता था
वृष-मारुत-प्रवाह पद्धति थी।

[११५]

शाल वृक्ष तल उतर शिला पर
तप-प्राणों में सिद्धि समानी
बोली वर्द्धमान से, "जागो
आज हुये तुम केवलज्ञानी"।

[११६]

धन्य शिला, सार्थक तरु-छाया
शत सौभाग्यवती ऋजुकूला
सर्व ज्ञान - चन्द्रोदय - शोभित
संध्या, और सिद्धि तप मूला।

[११७]

वर्द्धमान के नयन खुले तो
देखा सारा जग सोता है
जागृति का भ्रम, इस निद्रा में
अखिल कर्म-नियमन होता है।

[११८]

सकल समस्यायें जो उनके
तप चिन्तन का मूल रहीं थीं
विगत बयालिस वर्षों से जो
मनस दोल पर झूल रहीं थीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११६]

उनके समाधान अब शाश्वत
हुये दृष्टिगोचर कुछ ऐसे
सरल शुद्ध निष्पक्ष निरामय
किसी स्फटिक में बिम्बित जैसे ।

[१२०]

वस्तुरूप में विश्व तत्त्व वे
लगे देखने अपने सम्मुख
सहज सर्वदर्शी, समदर्शी
दुख न रहा दुख, सुख न रहा सुख ।

[१२१]

'भिन्न नहीं है व्यक्ति व्यक्ति के
जीवन कष्ट अमंगल मंगल
है समस्त चैतन्य सृष्टि का
रूप, एक सत्ता का निर्मल ।

[१२२]

किसी सबल की इच्छा पर क्यों
निर्बल की इच्छा मन मारे
आग्रह, घृणा, क्रोध, हिंसा पर
खड़े अनर्थ जगत के सारे' ।

[१२३]

वर्द्धमान की यह इच्छा थी
'नव-अनुभूति रश्मि की गति से
जन मन को आलोकित करदे
सत्य, शील, सौमनस, सुमति से' ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

दर्शनेच्छु जो जन भी आता
उससे तर्क समय का करते
नव - विचार - मुक्तामणियों से
मन - विवेक का अंचल भरते ।

[१२५]

सामाजिकता की समतामय
हो आधारशिला निश्च्छलता
रहे अहिंसा के शासन में
व्यवहारों का गौरव पलता ।

[१२६]

केवल ज्ञान प्राप्ति का जनरव
मलयज-गंध-पवन सा मनहर
पहुँचा नगरों की ग्रामों की
सीमाओं में दिशि दिशि घर घर ।

[१२७]

चेटक, बिम्बसार मगधाधिप—
नृप, नृपकुल श्रद्धा कौतूहल
प्रेम, दिदृक्षा, आशंसन ले
राजगृहों से द्रवित दिये चल ।

[१२८]

अनतिदूर अतिदूर यथास्थिति
नारीसृष्टि विविधवय - वेशा
श्रवण हेतु आये नर प्रमुदित
वर्द्धमान की प्रथम निदेशा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२६]

शब्द सुमन से झरे जहां से
धरा नहीं थी, गगन नहीं था
वाणी के वैभव से जैसे
गूंज उठा वह विजन कहीं था।

[१३०]

"वर्ण-भेद, पशु-बलि यज्ञों से
बढ़कर और अधर्म नहीं है
व्यक्ति व्यक्ति को प्राचीरों में
बांधे, यह नय-मर्म नहीं है।

[१३१]

हिंसा और अपव्यय दोनों
जन-समाज-अपकर्ष विधायक
जीव जीव है, ईश्वर भी है
कैसी प्रजा कौन अधिनायक।

[१३२]

दर्शन, ज्ञान, चरित्र पूर्ण से—
आत्मा शाश्वत, सत्य सनातन,
अन्य पदार्थ जगत, जीवन के
हैं केवल संयोग-सुयोजन"।

[१३३]

जन-मत ने यह कहा देशना
एक व्यक्ति की बात नहीं है
यह समष्टि का सत्य-विवेचन,
कुछ भी स्वार्थ-वशात नहीं है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३४]

इसी भाव-धारा से प्रेरित
सभी वर्ग-वय के नर नारी
वर्द्धमान की वार्ताओं को
कहते थे, यह बात हमारी।

[१३५]

सबको सम्बोधित करती थीं
भेद-भाव-विरहित शिक्षायें
इसी हेतु अभिधीत हुईं ये
'समवशरण', देशना-सभायें।

[१३६]

समवशरण सर्वाधिगम्य था
बाल युवक नर अथवा नारी
त्यक्त-स्पर्श्यास्पृश्य भाव सब
धर्म-कर्म-चिन्तन अधिकारी।

[१३७]

समवशरण के यात्रा-पथ में
आत्म-भाव-जाता श्रद्धायें
बिछ जाया करती थीं पग पग
सजग प्रतीक्षा, घन आशायें।

[१३८]

वाणी सरस जनप्रिय भाषा
किन्तु धर्म-तत्वार्थ गहन है
दृश्य और दृष्टान्त-वचन से
हो जाता सुग्राह्य कथन है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३९]

अतः अपेक्षा समवशरण को
हुई विवुध व्याख्याकारों की
सन्देशों को, सन्देशों के—
सर्व सुलभ, बोधाधारों की।

[१४०]

लिया स्वयं देवेश शक्र ने
इस आयोजन का सारा श्रम
और शिष्य के छद्म रूप में
पहुँचे 'इन्द्रभूति' के आश्रम।

[१४१]

एकादश गणधर उस युग के
थे बहुज्ञ, विद्या-पारंगत
शतशत शिष्य समूहों के गुरु
अखिल ज्ञान की शिक्षा में रत।

[१४२]

'इन्द्रभूति गौतम,' उस गणधर
एकादश की मूर्द्धा-मणि थे
ज्ञान-तेज के मध्य गगन में
चढ़े हुये अमिताभ तरणि थे।

[१४३]

छद्म शिष्य ने उनको अर्पित
की व्याख्या-हित, अद्भुत गाथा
"गुरु-कृत-अर्थ, नहीं समझा मैं—
इसका", कहा झुकाकर माथा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४४]

उस विचित्र गाथा का तात्विक—
अर्थ, न इन्द्रभूति कर पाये
शिष्य वर्ग के मध्य ग्लानिवश
मौन रहे, अज्ञान छिपाये।

[१४५]

और शिष्य से कहा, "तुम्हारी—
तृप्त शीघ्र जिज्ञासा होगी
चलो तुम्हारे गुरु के सम्मुख
इस गाथा की व्याख्या होगी"।

[१४६]

साथ, इन्द्र के इन्द्रभूति जब
संध्या समवशरण में आये
वर्द्धमान के दृष्टि-तेज से
ज्ञान-गर्व-कुरवक मुरझाये।

[१४७]

"शिष्यों का समुदाय, गर्व यह
गौतम ! ज्ञान, प्रमाण नहीं है
तुम्हें अभी तक आत्मा अथवा
स्वयं आत्म का ज्ञान नहीं है।

[१४८]

शत शत दुर्जय योद्धाओं को
रण में वीर पराभव देता
जो अपनी आत्मा को जीते
वह योद्धा है सर्व-पिजेता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४६]

धर्म श्रेष्ठ मंगल है जग का
धर्म अहिंसा, तप, संयम है
जो मन रमण धर्म में करता
वह देवों के लिये अगम है"।

[१५०]

वर्द्धमान के ज्ञान-सूर्य ने
इन्द्रभूति की आँखें खोलीं
जिस झोली में रजकण, उसने
मुक्ता देखे मणियाँ तोलीं।

[१५१]

'इन्द्रभूति, 'मेतार्य', 'अकम्पित'
'मण्डित', 'अग्निभूति', गणधर जन
'अचल', 'सुधर्मा', 'आर्य' प्रभृति सब
वर्द्धमान के शिष्य गये बन।

[१५२]

विपुलाचल पर प्रथमायोजित
प्रथम वाक्य ही यह प्रवचन का
वस्तु-स्वरूप-निदान, गया बन
ज्ञान-मंत्र समवशरण-जन का।

[१५३]

"उत्पादव्ययध्रौव्य' गुण-त्रय
हर पदार्थ में विद्यमान है
हर्ष, विषाद, तटस्थ-भावता
त्रिविधिक जिसका फल-विधान है"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५४]

किसी नृपति के पास कभी कुछ
महाद्रव्य सा स्वर्ण कलश था
जिसे सुरक्षित रक्खा उसने
वंशानुगत-प्रेम के वश था ।

[१५५]

उस राजा के दो सुपुत्र थे
पृथक पृथक जिनकी इच्छायें
किये हुये उस घट पर केन्द्रित
थे दोनों निज निज आशायें ।

[१५६]

एक चाहता था उस घट से
सुन्दर स्वर्ण-मुकुट हो निर्मित
और अपर की इच्छा यह थी
यथारूप घट रहे सुरक्षित ।

[१५७]

प्रथम पुत्र को स्वर्ण मुकुट ही
बनने की आशा का सुख था
पर द्वितीय के मन को घेरे
घट-विनाश का भारी दुख था ।

[१५८]

किन्तु तटस्थ नृपति का इसमें
हर्ष, विषाद-अपरिचित था मन
क्योंकि सुरक्षित उन दोनों ही
रूपों में था उसका कंचन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५६]

वस्तु-गुणत्रय-सूत्र-भाव की
यह दृष्टान्त सरल व्याख्या है
जिस पर चल गन्तव्य सुलभ हो
वह वन-वीथि, राज-रथ्या है।

[१६०]

यायावर ने पूछा जिसकी—
शरण, सर्वजन अधिगम्या है
यह जिज्ञासा प्रबल, कि मेरे—
प्रेरक ! वह समवशरण क्या है ?

[१६१]

प्रेरक बोला, "वह आयोजन
वह संस्थिति है, मिलन-मंच है
जिसमें जाकर जीव समझता
अमिट तत्व क्या, क्या प्रपंच है।

[१६२]

एक मूर्त समवशरण भी था
शक्र-नियोजित धनद-विनिर्मित
ऋजुकूला के तट पर सुन्दर
दृष्टि गर्व हिम-पारद-धवलित।

[१६३]

एक सभामण्डप त्रिकोट था
द्वार चार जिसके नभ-भेदी
द्वार द्वार पर दृढ़ स्तंभ थे
और मध्य में मण्डित वेदी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६४]

वेदी अथवा गंधकुटी का—
कौशल, सुखद कला का श्रम था
द्वादश कक्ष चतुर्दिक जिन में
समासदन का निश्चित क्रम था।

[१६५]

प्रथम श्रमण फिर ऋषिगण, तदुपरि
स्वर्ग देवियाँ फिर श्रमणायें
व्यन्तर भवन देवियाँ क्रम से
भवन-देव, जितने भी आयें।

[१६६]

व्यन्तर स्वर्ग-देव, फिर मानव
पशु पतत्रि जीवों के परिकर
नवागन्तुकों के निमित्त थे
कितने ही आसन्द मनोहर।

[१६७]

गंधकुटी के मध्य भाग पर
था तीर्थंकर का सिंहासन
समवशरण को सर्व सुलभ हो
जिससे उनका दर्शन प्रवचन।

[१६८]

समवशरण जब पूर्ण हुआ तो
बजने लगीं देव-दुन्दुभियाँ
दिशा दिशा को सूचित करतीं
उठी अलौकिक गीत-ध्वनियाँ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६९]

घन प्रकाश बरसा अम्बर से
भू से उत्स ज्योति के फूटें
लगा कि जैसे जड़ जंगम की
जड़ताओं के बन्धन टूटे।

[१७०]

घनालोक में समय गया धुल
निशा दिवस थी, निशा दिवस था
सहज शत्रुता बनचर भूले
बरसा कुछ ऐसा समरस था।

[१७१]

रहा न कोई दृश्य भयावह
कोई रूप न था मायावी
अंचल में इस समवशरण के
सभी जीव थे समताभावी"।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ६

[१]

भारत भू के जिस अंचल में
मंगल विहार-रत समवशरण—
जाता था खुल-खुल जाते थे
गुरुज्ञान-ग्रन्थ के नव प्रकरण।

[२]

दर्पांध व्यवस्था पर युग की
ज्यों परिवर्तन की भृकुटि वक्र
समवशरण के आगे आगे
जम कर चलता था धर्मचक्र।

[३]

थे लिये चतुर्विंशति सुदण्ड
जिस ज्योति-परिधि का दृढ़ आश्रय
बरसाते थे पथ में स्फुलिंग
उसको घेरे आलोक-वलय।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

आकाश-मार्ग पर लगता था
वह अखिल तेज का आकर हो
सम्पूर्ण तिमिर का ध्वंस किये
चलता द्वितीय रवि भास्वर हो।

[५]

तीर्थंकर-मण्डल के प्रतीक
चौबीस सरल सम नेमि-दण्ड
थी सत्य ज्ञान का पुंज, परिधि
निग्रह-विधान, अक्षा अखण्ड।

[६]

नारी पुरुषों, भू-पतियों का
सर्वत्र शिष्य समुदाय बढ़ा
समवशरण के क्षीरोदधि पर
जैसे पूनम का ज्वार चढ़ा।

[७]

है बाणी का शृंगार शब्द
खिलता मधु कुसुमों से उपवन
अमृत सा पी समवशरण में
सन्तुष्ट सिहरता था जन जन।

[८]

तब वर्द्धमान ने एक बार
अपने प्रवचन के मध्य कहा
निश्छल जो भाव हृदय का था
सहसा होकर ही व्यक्त रहा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

"यह ध्येय नहीं मेरा, मेरे—
पीछे शिष्यों का वर्ग चले
स्रष्टा की इच्छा से शासित
अविराम सर्ग का सर्ग चले।

[१०]

केवल अभीष्ट यह है मेरे—
अर्जन का, हो सम्यक प्रचार
निःशेष अविद्या का भ्रम हो
नव्योदय से ज्यों अंधकार।

[११]

मेरे प्रतिपादित सत्यों के
हैं तर्क सभी संभव अकाट्य
तो भी उनकी स्वीकृति निमित्त
करता न किसी को कभी बाध्य।

[१२]

विश्वास मांगती नहीं कभी
विश्वासों की निश्चल क्षमता
मेरे ही पथ पर चल अनन्त
मंगल पायेगी मानवता"।

[१३]

जो उठा 'राजगृह' की भू से
समता का अद्भुत शंखनाद
वह लगा व्यक्ति को सत्य एक
सामाजिकता का निर्विवाद।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

आस्था-जड़ प्रचलित मूल्यों के
दृग वर्द्धमान ने खोल दिये
मानस मानस में ज्वार उठा
जीवन को वह हिल्लोल दिये।

[१५]

"है किसी स्वयंभू सत्ता की—
रचना अग जग यह भ्रम प्रसार
कर्त्ता, भर्त्ता, संहर्त्ता की
सम्पूर्ण कल्पना निराधार।

[१६]

यदि ईश्वर ही है सृष्टिकार
तो अखिल सृष्टि सुखदुख-मय क्यों
यदि कर्म-जन्य हैं सुख दुख तो
उस गौण शक्ति का हो भय क्यों।

[१७]

लीला है जग तो लीला का
सुख-भोक्ता सर्व समर्थ नहीं
क्या इस प्रवृत्ति से पीड़ित की
आनन्द रूपता व्यर्थ नहीं?

[१८]

जिससे न किसी की प्यास बुझे
क्या महिमा उस मरु सागर की
सामर्थ्यवान है कर्म, किन्तु
पूजा होती है ईश्वर की!

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६]

सत्यानुभूति है कठिन किन्तु
यदि हो चिन्तन की गहन दृष्टि
उन्मुक्त पृष्ठ की भांति सहज
कहती है अपनी बात सृष्टि ।

[२०]

हैं जीव, अजीव, अधर्म, धर्म
आकाश, काल षट् सृष्टि-तत्त्व
इस रचना का उद्देश्य नहीं
कोई लीला या ईश्वरत्व ।

[२१]

सम्पूर्ण जगत के हैं केवल
दो रूप, दृश्य एवं अदृश्य
यह चिर अनादि, यह स्वयंभूत
अतिरिक्त नहीं कोई रहस्य ।

[२२]

चैतन्य जीव, स्थावर अजीव
है धर्म, जीवजड़-गति विधान
पंथी को तरुछाया स्वरूप
करता अधर्म संस्थिति प्रदान ।

[२३]

आकाश बसाये है निज में
अवशेष अखिल यह द्रव्य जगत
गतिमान काल से होती है
परिवर्तन की प्रक्रिया सतत ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

यह जीव द्रव्य या आत्मतत्त्व
है दो रूपों में विद्यमान
कुछ वह जिसकी स्थिति है जग में
कुछ वह जो जग से मुक्त-प्राण ।

[२५]

जो जगत स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म
या महाकाय, वह संसारी
जड़ से निबद्ध, होता न अतः
वास्तविक बोध का अधिकारी ।

[२६]

जड़ चेतन हैं सम्बद्ध किन्तु
अन्योन्य रूप करते न ग्रहण
जो रूप वस्तु का है, उसका
करती न कभी वह उत्क्षेपण ।

[२७]

इन दो द्रव्यों की बन्धन-स्थिति
क्यों है इसकी है प्रथक बात
इस विशद कर्म-सिद्धान्त शुद्ध
के व्याख्याता हैं तत्त्व सात ।

[२८]

जड़, चेतन, आस्रव, बँध, सँवर
निर्जरा, मोक्ष, के प्रस्तर कण
है स्वर्ण जीव से चिर अविलग
अज्ञान अविद्या का कारण ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६]

तप में गल कंचन जिस प्रकार
रज-कण विरहित हो जाता है
कर्माणुजाड्य से मुक्त जीव
अपने स्वरूप में आता है।

[३०]

कर्मानुबद्ध जीवात्मा को
मन-वचन-काय-कृत परिकंपन
रखता कर्मों से समाश्लिष्ट
करता नव कर्मों का प्रजनन।

[३१]

यह नव्य कर्म-क्रम ही 'आसव'
है 'बन्ध' कर्म-प्रति घनाश्लेष
नवकर्म-क्रम स्थिति-क्षय, 'संवर'
'निर्जरा' कर्म-विलयन अशेष।

[३२]

कर्माणु अजीवों से अनन्त
जब जीव विलग हो जाता है
है यही 'मोक्ष'-सत्ता, जिसमें
फिर नहीं कर्म-क्रम आता है।

[३३]

आच्छन्न ज्ञान को कर लेना
जिन कर्मों का है सहज धर्म
आख्यात कर्म के भेदों में
वे हैं 'ज्ञानावरणीय' कर्म।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

जो 'दर्शन आवरणीय' कर्म
वे दर्शन गुण के आच्छादक
मधुलिप्त खड्ग सम 'वेदनीय'
ऐन्द्रिय सुख दुख के अनुभावक ।

[३५]

जो सुरा सदृश करते विमूढ़
आत्मा को क्षण क्षण, वे दुर्दम
सम्पूर्ण कर्म हैं 'मोहनीय'
क्रोधादि विकारों के उद्गम ।

[३६]

रखता शरीर से 'आयु' कर्म
बांधे आत्मा को निर्विकार
जो कर्म 'नाम' संज्ञा के हैं
सामर्थ्यवान वे चित्रकार—

[३७]

नामांकित करते जीवों को
बहुरूप योनि-संकायों में
अविराम, अलक्षित, अप्रमाद
नरकादि विविध पर्यायों में ।

[३८]

जो 'गोत्र' कर्म हैं वे देते
जैसे कर्मक्षम, कुंभकार
सारे जीवों को उच्चनीच
कुल रूपों का संगति-विकार ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

जो पात्र प्रदाता के सुमध्य
वाधा विघ्नों के द्वन्दवाय
भण्डारी के समरूप अड़ें
वे कर्मसमुच्चय 'अन्तराय'।

[४०]

इस जग में जो कुछ दृश्यमान
कुछ जो अदृश्य का संप्रसार
यह कर्म-द्रव्य ही जीवों की
प्रत्येक प्रवृति का सूत्रधार।"

[४१]

यायावर सुन यह कर्म-भेद
सूक्ष्मातिसूक्ष्म उत्फुल्ल हुआ
मानों समीर के अंचल ने
बढ़ कर कुड्मल मधुकाम छुआ।

[४२]

कितना चिन्तन-गांभीर्य, और
अत्यधिक श्रवण-लालसा बढ़ी
सामीप्य सुगमता आश्रय की
छू वृक्षमूल वल्लरी चढ़ी।

[४३]

प्रेरक ने देखा स्ववश पथिक
अब यह सुपात्र अब अधिकारी
कर रहा यहां कुछ स्थैर्य ग्रहण
सर्वत्र रहा जो संचारी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

"निज कर्म-विधायक व्यक्ति स्वयं
भोक्ता भी है परिणामों का
वह जिनको आमंत्रण देता
योद्धा है उन संग्रामों का।

[४५]

कर्मों के बन्धन से विमुक्ति
संभव है अपने यत्नों से
धनवान नहीं होता कोई
पर गृह के संचित रत्नों से।"

[४६]

वैशाली के अधिवासी सब
इस तीव्र-तृषा से समभिभूत
'हम पीते उनका ज्ञानामृत
उनकी वसुधा पर त्याग-पूत।

[४७]

आये देने समवशरण को
आग्रह अनुरंजित आमंत्रण
जैसे कोई सामर्थ्यवती
प्रार्थना इष्ट का करे वरण।

[४८]

समवशरण को लाया स्वदेश
वैशाली का आग्रह निदान
वैभव की वसुधा पर आये
परित्यक्त-विभव वे वर्द्धमान।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४६]

वैशाली की भू वर्द्धमान—
नृप-कुल, फिर जनमन का ममत्त्व
वात्सल्य स्नेह ने श्रद्धा नें
किस किस ने समझा जीव तत्त्व ।

[५०]

"यह अखिल जगत है एकभाव
छोटा न बड़ा कोई प्राणी"
थे सत्य और समता दो स्वर
लोकोत्तर अर्हत की वाणी ।

[५१]

"प्रत्येक जीव सक्षम स्वतंत्र
निज में परिपूर्ण इकाई है
केवल प्रतीति का छल है वह
जो योनि रूप में पाई है ।

[५२]

मेघावृत रवि में ताप, तेज,
उष्मा, का भास नहीं होता
आत्मा अनन्त गुणवान किन्तु
इसका विश्वास नहीं होता ।

[५३]

आच्छन्न किये है क्योंकि उसे
कर्मानुबद्धता - तमावरण
सर्वत्र भटकते रहते हैं
आत्मानुभूति के मन्द चरण ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

होते गुण प्रकट, सिमटते ही
कर्मों के बन्धन का प्रसार,
आलोक छलक ही पड़ता है
जब हट जाता घन अंधकार।

[५५]

है जीव ज्ञान से युक्त, और
करता चिर सुख का अन्वेषण
दुख विरति हेतु रहते सचेष्ट
उसकी गति के अविराम चरण।

[५६]

निस्सार मृत्यु वह भय मिथ्या
इससे भी वह अनभिज्ञ नहीं
वह चिरपावन, चिर अविकृत, इस—
संस्थिति से कब संविज्ञ नहीं ?

[५७]

अविनश्वर है यह जीव किन्तु
नश्वर उसका काया-बन्धन
जिसकी जड़ता के वश करता
अनुभव जीवन का हास रुदन।

[५८]

वह चिराकांक्षी उस सुख का
जो सुख अव्यय है शाश्वत है
जो जन्म, जरा भय, मरणों के
अनुतापों से चिर अविगत है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

इस सुख की प्राप्ति असंभव है
शत जन्मों तक निर्वाण विना
चैतन्य प्रबुद्ध नहीं होता
जड़ता में जैसे प्राण विना।"

[६०]

वैशाली के नरनारी ने
यह तत्त्वज्ञान अमोल सुना
नयनों में उद्वेलित सागर
मानस में भर भूडोल सुना।

[६१]

हो गई सिक्त कितनों ही के
कौशेयांचल की पूर्ण धरा
सद्भाव समीरण बलिहारी
खिलते खिलते हर पुष्प झरा।

[६२]

थे अश्रु किसी दुख के न अश्रु
अनुभूति गर्व की द्रवित हुई
सुत की महानता के सम्मुख
जब मातृभूमि उल्लसित हुई।

[६३]

'यह वर्द्धमान की समुपलब्धि
कम नहीं राजसत्ताओं से
जन जन ने तोला शब्द शब्द
कंचन माणिक मुक्ताओं से।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

"तुम जियो युगों तक युगाधार
अविजित साम्राज्य तुम्हारा हो
अभिराम तुम्हारी यात्रा का
हर पारावार किनारा हो।"

[६५]

अनुभूति-तरंगों की वेला
इस सुख से पुलकित और रही
यह ज्ञात नहीं फिर और कभी
इस भू पर यह रस-धार बही।

[६६]

समवशरण के पथ में आये
काशी कुरु कोसल, कामरूप
कश्मीर मगध पांचाल वंग—
भूखण्ड, मद्र चेदी अनूप।

[६७]

जांगल, किष्किन्धा औ'कलिंग
केरल दशार्ण-भू आन्ध्र मलय
'मंगल विहार' की मल्ल गौड़
सर्वत्र हुई अविरत जय जय।

[६८]

धुर छोरों तक भारत-भू को
अनुशासित करते वर्द्धमान
घट-घट में भरते रहे विमल
अमृत समान निज नव्य ज्ञान।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

"ईश्वर ईश्वर है किसी रूप
लेता कोई अवतार नहीं
जीवों का भाग्य-नियंता बन
बनता सुख दुख का द्वार नहीं।

[७०]

निर्वाण प्राप्त कर आत्मा ही
बनता परमात्मा का स्वरूप
होने लगते हैं प्रकट स्वयं
प्रच्छन्न सभी गुण गण अनूप।

[७१]

यह अखिल कर्म-संसर्ग-जन्य
जड़ताओं की है परिसमाप्ति
इसके उपरान्त नहीं होती
इसको भू-भव की पुनर्प्राप्ति।

[७२]

प्रत्येक व्यक्ति बन सकता है
ईश्वर, कर आत्मा का विकास
पर सत्ता पर निर्भर रहना
अपनी प्रभुता का परम ह्रास।

[७३]

'सम्यक् दर्शन', 'सम्यक् ज्ञानम्'
निर्वाण हेतु 'सम्यक् चरित्र'
इस रत्नत्रय से ही स्वरूप
आत्मा का होता है पवित्र।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

षट् द्रव्य, सप्त तत्त्वों के प्रति
सच्ची श्रद्धा 'सम्यक् दर्शन'
सम्यक् चरित्र है, सत्य रूप—
की प्राप्ति हेतु सत्कृताचरण।

[७५]

तत्त्वों, द्रव्यों की वस्तु-स्थिति
सम्बन्धों का वास्तविक-बोध
जो देता 'सम्यक् ज्ञान', सतत—
करता जीवन-दुष्पथ प्ररोध।

[७६]

वास्तविक तत्त्व की अभिगति के
'सम्यक् दर्शन' ज्ञानोपरान्त
सम्यक् चरित्र का बोधोदय
होने लगता है अविभ्रान्त।

[७७]

सूखे न व्यक्ति का अन्तःसर
कुछ ऐसा जीवन अर्जित हो
औचित्य यही है विमल बुद्धि
श्रद्धा-चरणों को अर्पित हो।

[७८]

सम्यक् चरित्र ही करता है
दुख दुविधाओं का समाधान
स्थायी समाज-संरचना का
आदर्श यही होगा महान।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

संपूर्ण जीव जग की इच्छा
हो प्राप्त सुखी जीवन अक्षय
सर्वोपरि धर्म अहिंसा है
संश्रेयस्कर अपगत-अविनय।

[८०]

उपलब्ध-ज्ञान सम्यक चरित्र—
आत्मा, दयार्द्र, शाश्वत, विनीत
जीवन की अविगत-यात्रा पर
पाथेय लिये बढ़ता अभीत।

[८१]

सम्यक् चरित्र ही धर्म अर्थ
सत्ता, समाज का मूल-मंत्र
आसक्ति, शोक, संग्रह विहीन
निःशेष लोक-आचरण-तंत्र।"

[८२]

आचार-संहिता जीवन की
जो वर्द्धमान ने प्रस्तुत की
उसमें विचार की उज्ज्वलता
शतधा रूपों में विश्रुत की।

[८३]

"सामाजिक-जीवन का सुख है
यद्यपि सापेक्ष विनय-संयम
है सदाचार के लिये इष्ट
अपने विचार की शुद्धि प्रथम।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

वैचारिक-क्रान्ति नहीं होगी
तो जन सम्मान नहीं होगा—
जो व्यक्ति व्यक्ति के मध्य खड़ा
कम वह व्यवधान नहीं होगा।"

[८५]

यायावर ! चिन्तन-शुचिता का
जो वर्द्धमान ने ज्ञान दिया
उस अनैकान्तिक चिन्तन ने
चिन्तन को क्रान्ति-विहान दिया।

[८६]

है वही अनैकान्तिक जिसमें
एकान्तिकता का निर्विरोध—
निर्णय ही अन्तिम मान्य नहीं
वह, क्योंकि एक देशीय बोध।

[८७]

हर संभव स्थिति की स्वीकृति का
रहता है जिसमें खुला द्वार
ज्ञातव्य वस्तु या विषयों के
हर ज्ञान रूप के प्रति उदार।

[८८]

यह नहीं असम्भव हो न सकें
एक ही खाद्य के भिन्न स्वाद
इस सर्वग्राह्य चिन्तन-विधि की
भू पर ही स्थित है स्याद्वाद।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

नव वस्तु-स्वरूप-समीक्षा के
संभव जितने भी हों प्रकार
उतनी ही भिन्न दृष्टियों से
हो सकता है उस पर विचार।

[९०]

एक ही दृष्टि को पूर्ण, कभी
स्वीकृत करना पर्याप्त नहीं
होती भी इससे वस्तु-रूप—
गुण की समग्रता प्राप्त नहीं।

[९१]

इस कथन-समर्थन में व्यवहृत
है लोक-प्रिय आख्यान एक
एक ही वस्तु से सम्बन्धित
दृष्टियां भिन्न बहुविध विवेक।

[९२]

कौतूहल के वश एक बार
उत्सुक हो कुछ अंधे साथी
एकत्रित होकर साथ-साथ
देखने कहीं आये हाथी।

[९३]

तन, पदस्तंभ, शुण्डिका कर्ण
जो जो भी जिसके हाथ पड़ा
वह कर स्पर्श से अभिप्रेत
कुछ काल समझता रहा खड़ा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

निज निज अनुभव को मान गये
जिज्ञासु हठीले पूर्ण ज्ञान
पर क्या गयन्द का वस्तु-रूप
उनमें से कोई सका जान।

[६५]

है उचित वस्तु से पूर्व, वस्तु—
के विषयों की हृदयंगमता
जिससे कि एक देशीय न हो
चिन्तन, अनुचिन्तन की क्षमता।

[६६]

अपने अनेक धर्मों वाली
है क्योंकि यहां प्रत्येक वस्तु
एक ही धर्म द्वारा गृहीत
सम्पूर्ण वस्तु होती न अस्तु।

[६७]

जो एक काल में एक दृष्टि
करती पदार्थ का प्रतिपादन
वह नहीं पूर्ण की परिभाषा
है एक पक्ष का ही चिन्तन।

[६८]

अतएव उचित है वस्तु रूप
की जब भी हो कोई व्याख्या
यह भी माना जाये, न कथन—
है एक पक्ष का भी मिथ्या।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

करती है दृष्टि विशेष कभी
जो वस्तु रूप का अनुभावन
वह सत्य, किन्तु यह भी संभव—
हो अन्य दृष्टि का अन्य कथन।

[१००]

यह वस्तु धर्म हैं वस्तु मध्य
सापेक्ष भाव से विद्यमान
उनमें अन्योन्य विरोधों की
आती न कभी स्थिति क्षण प्रमाण।

[१०१]

एक ही व्यक्ति एक ही समय
है पिता पुत्र मातुल भाई
अतिरिक्ति अन्य सम्बन्धों की
संगति भी है उसने पाई।

[१०२]

सापेक्ष रूप से इन समस्त
सम्बन्धों का क्रम निर्विवाद
चलता रहता अविरत अविघ्न
अविरोध अनाकुल अप्रमाद।

[१०३]

है वस्तु तुल्य यह व्यक्ति और
सम्बन्धों सी दृष्टियां भिन्न
निज निज के आग्रह से विमुक्त
होते न परस्पर कभी खिन्न।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

सम्बन्धों के हठ की स्थिति में
होता विवाद बढ़ती जड़ता
यदि दृढ़ अपेक्षा भाव रहे
मन में तो भेद नहीं पड़ता।

[१०५]

जो उभय करों का रखती है
ब्यापार नियत, सन्तुलनशील
खींचती एक को नहीं अधिक
देती न अपर को अधिक ढील।

[१०६]

मन्थान-लोचना गोपी वत
जिस रूप रज्जु कर संप्रसार
आकर्षण या श्लथयन अभीष्ट
प्रतिपाद्य पक्ष पर हो विचार।

[१०७]

हर दृष्टिकोण के आदर का
अवसर देता है स्यादवाद
औदार्य-ज्योति से आग्रह का
कल्पष धोता है स्यादवाद।

[१०८]

जो स्यादवाद की भाषा का
व्यवहारों में करता प्रयोग
उसका जीवन मर्यादित है
छूते न उसे संघर्ष-रोग।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

है स्यादवाद का न्याय कठिन
यायावर ! इसे समझना फिर
प्रतिमा-प्रस्थापन से सुपूर्व
हो शुद्ध धारणा का मन्दिर ।

[११०]

इस ज्ञान-शृंखला के क्रम में
ज्ञातव्य विषय है वस्तु-तथ्य
अभिगत यथार्थवत लगता है
सुविवेक-साध्य गंभीर कथ्य ।

[१११]

जिज्ञासु सर्वदा वस्तु-तथ्य
दो विधियों से करता मनस्थ
पहली 'प्रमाण' है 'नय' द्वितीय
दोनों का हो प्रणिधान स्वस्थ ।

[११२]

इस वस्तु-तथ्य-संपूर्ण-रूप—
का संवेत्ता होता 'प्रमाण'
पर उस समग्रता के क्रम का
'नय' करता केवल अंश-ज्ञान ।

[११३]

'नैगम' 'संग्रह' 'व्यवहार' और
'ऋजु सूत्र' 'शब्द' नय-भेद सात
हैं 'समभिरुढ़' सह वस्तु तथ्य—
रूपों के बोधक सुविख्यात ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

विन किये बुद्धिगत वस्तु-तथ्य
दर्शन का ज्ञान नहीं खिलता
लहरों की झंझा में बहते
नाविक को कूल नहीं मिलता।

[११५]

जग और जीव का यह चिन्तन
है अखिल सृष्टि-तत्त्व-प्रबोध
इस सीमा की उपलब्धि-हेतु
सक्रिय प्रज्ञा के सभी शोध।

[११६]

इसका अज्ञान अविद्या है
संप्राप्ति इसी की सत्य ज्ञान
यह सत्य ज्ञान ही करता है
एकात्म प्रतिष्ठा का विधान।

[११७]

एकात्मज्ञान से होती है
उज्ज्वल आत्मा की व्यापकता
जिससे सामाजिक नियमन की
आधार-भूमि बनती समता।

[११८]

जिसमें खोया है जीव जीव
यह अखिल अविद्या-अंधकार
सुख के पथ की दुर्लंघनीय
जड़ बाधाओं का समाहार—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११६]

हटने लगता, विच्छिन्न स्वयं
हो जाती निर्मल लक्ष्य-दिशा
फिर उस अनन्त की मधु ऋतु में
जलते न दिवस, रोती न निशा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ७

[१]

निर्मल मनोज्ञ मधुसिक्त वाह्य
अभ्यन्तर का गौरव सुगंध
मधुवन का सुख है वही सुमन
जिसका यह नैसर्गिक प्रबन्ध ।

[२]

जिसकी ज्योत्स्ना से शीत धरा
निज अंचल का शृंगार करे
हर दृष्टि उसी पर उठती जो
नक्षत्रों में विधु बन विहरे ।

[३]

निष्कलुष रूप मन घन अभेद
कंचन से जिसकी तोल नहीं
माणिक माणिक है अरे ! कौन
करता माणिक का मोल नहीं ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

व्यक्तित्व सुमन विधु माणिक हो
फिर क्या अतीत क्या वर्तमान
कल्पान्त न धूमिल कर पाते
सामाजिकता का छवि-विहान ।

[५]

ऐसे व्यक्तित्वों का समाज
था वर्द्धमान की विमल दृष्टि
वे देख रहे थे स्वस्थ पूर्ण
निर्दोष व्यष्टि में ही समष्टि ।

[६]

जग और जीव का शुद्ध ज्ञान
निर्भ्रम व्यवहार बनाता है
फिर भी अनन्त व्यवहारों से
अपने जीवन का नाता है ।

[७]

तत्त्व ज्ञाता हो व्यक्ति, किन्तु
उसका व्यवहार विमल भी हो
अध्यात्म और भौतिक जीवन
दोनों का दृढ़ संवल भी हो ।

[८]

जो भ्रान्त, पथों में भटके उन
व्यक्तित्वों का सम्यक विकास
व्यवहारों के नैशांचल में
जैसे पूनम का सुखद हास ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

तत्त्वज्ञ व्यक्ति भी पूर्ण नहीं—
होता, यदि व्यवहारज्ञ न हो
जीवन का सुख सुख ही क्या है
यदि जन सुख का मर्मज्ञ न हो।

[१०]

दिग्भ्रान्त पथिक की यात्रा है
मिथ्या विश्वासों का जीवन
जिसकी गति को विश्राम नहीं
जिसके नयनों में सूनापन।

[११]

विश्वास बने ऐसा साथी
निर्भय, समर्थ, निर्भ्रान्त चले
है वही सफल यात्रा अनन्त
अपने यात्री का जो न छले।

[१२]

विश्वास सुदृढ़ जब होता है
मन बुद्धि स्वयं रहते समर्थ
होती न बुद्धि को भ्रान्ति कभी
करता न कभी मन कुछ अनर्थ।

[१३]

ऐसे ही सबलों का समाज
बढ़ती अनीति से लड़ता है
साम्राज्य विषमताओं का हो—
मन और बुद्धि की जड़ता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

जीवन का जीवन-चिन्तन से
सर्वदा रहा संघर्ष यही
वाणी विश्वासों पर पहरा
क्या होता है उत्कर्ष यही ?

[१५]

कहता हो बात उदय की कल
हो सब प्रकार सम्पन्न आज
शासन बदले गतियां बदलीं
बन सका न पर ऐसा समाज ।

[१६]

जिस नव समाज की रचना के
कल्पना - मूल थे वर्द्धमान
वह एक व्यवस्था का स्वर था
मानव मंगल का मधुर गान ।

[१७]

'जग जीव तत्त्व का अभिज्ञान
देता अंतस के नयन खोल
मिथ्या मानों से मुक्त व्यक्ति
होता है अपना स्वयं मोल ।

[१८]

भूडोल नहीं कोई प्रकोप
नक्षत्र नहीं सुख दुख होते
अपने कंधों पर शव अपनी
प्रभुता का, व्यक्ति नहीं ढोते ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९]

हो सामाजिक व्यक्तित्व विमल
हो सदाचार - मूलक विकास
भोगे न कभी मानव - जीवन
लघुता अभाव अवरोध त्रास ।

[२०]

जन सुचारित्र निर्माण हेतु
अनिवार्य पंच व्रत का विधान
समवशरण ने ढाला, जिसका—
थी पूर्ण अहिंसा प्रथम मान ।

[२१]

सत्यास्तेय, सुब्रह्मचर्य
अपरिग्रह ये अवशेष चार
व्यवहारों में आ जाने से
व्यक्तित्व निखरता निर्विकार ।

[२२]

ज्योत्स्ना से धुल आषाढ़ गगन
सौरभ से सज ज्यों वन्य कुसुम
शालीन रूप के मस्तक पर
जैसे पवित्रता का कुंकुम ।

[२३]

मानस लहरों में धवल हंस
हिमगिरि - विपिनों में देवदार
जैसे वाणी की संसृति से
अभिव्यक्ति सरसता के प्रकार ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

जिस भांति व्यवस्था के क्रम में
निश्चछल उभरे सौन्दर्य चित्र
प्राची अरुणाभा - अंचल में
निस्पृह मुस्काता बाल मित्र ।

[२५]

वक्ता की शब्दावलियों में
उद्देश्य छलकता विमल रूप
दृष्टान्तों की सरगम पर ज्यों
प्रतिभा-रागों की छवि अनूप ।

[२६]

शारदी निशा के अम्बर पर
नक्षत्र पुंज का विमल हास
अथवा उपवन की गलियों में
प्रातः वसन्त का मधु विलास ।

[२७]

इस पूत पंच व्रत की भू पर
व्यक्तित्व-विमलता का पलाश
करता सुवर्ण चित्रावलि से
भूषित जीवन के दिगवकाश ।

[२८]

प्रातः समीर का स्पर्श मात्र
हँसतीं कलियाँ खिलते प्रसून
पात्रता स्वयं अपदार्थ न तो
प्रेरणा एक भी नहीं न्यून ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९]

औदार्य - पवन से उड़ जाता
मानव - भेदों का तिमिर - चूर्ण
सब की अनुभूति हृदय में निज
लेकर होता है व्यक्ति पूर्ण ।

[३०]

'ऐसे चरित्र की परिणति में
सम्बन्ध - रूप नव ढलते हैं
व्यवहारों के, व्यवहारों की—
गरिमा के, अर्थ बदलते हैं ।

[३१]

विस्तृत होते हैं कर्म क्षेत्र
विस्तृत होता है आत्मत्याग
मिटने लगते हैं निज पर की
इच्छाओं के व्यवहृत विभाग ।

[३२]

कहता है यह आदर्श कि 'हो
सर्वत्र अहिंसा का पालन
मन वचन कर्म से हो न कभी
व्यापक जग में, जन जीव हनन ।

[३३]

इस रूप अहिंसा का चिन्तक
छल-मुक्त जगत में आता है
अपने पथ पर सद्‌भाव प्रेम
अपनत्व लुटाता जाता है ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

संयम रखती हैं चरण चरण
अभिराम अहिंसा की वाणी
'हो किसी शब्द से भी मेरे
आहत न कभी कोई प्राणी'।

[३५]

शृंगार अहिंसा शूरों का
अपदार्थ मानता इसे छुद्र
कासार - विहारी क्या जानें
कितना महिमामय है समुद्र ?

[३६]

मन का प्रतिबन्ध नहीं कोई
मन का व्यापार अहिंसा है
झंकृत होते आत्मा के स्वर
कुछ ऐसा तार अहिंसा है।

[३७]

समता का कमल अहिंसा के—
किरणोद्भव से खिलता प्रकाम
सर्वात्मभूत सत्ता के ही
परिचय का है यह एक नाम।

[३८]

करुणा आधार अहिंसा का
सहचर ममत्त्व, पर्याय प्रेम
इस पुष्पराग को उर में रख
अमिताभ न हो व्यक्तित्व-हेम ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

होता ही है शालीन सुभग
ले कमल, तरंगों पर तड़ाग
वह कौन दिशा है अरुणोदय
देता न जिसे सुषमा सुहाग ?

[४०]

जीवन यदि सहज विमलता है
तो उसका है आधार सत्य
व्यक्तित्व बने यदि प्राणवान
तो गौरव, यश, सत्कार सत्य।

[४१]

निर्भयता का सन्मित्र सत्य
है सत्य छद्‌म का आवर्जन
अनुभव, श्रुत, अर्जन, दर्शन का
निर्दोष और निःशेष कथन।

[४२]

पद से प्रभाव से अनभिभूत
निःशंक प्रलोभन से बल से
परिमल सा पावन पावक सा
जन्मा जैसे गंगाजल से।

[४३]

जो सत्य, सत्य है एकमात्र
उसका कोई विनिमेय नहीं
यह भौतिक सुख हो न हो किन्तु
सत्यान्य शेष कुछ श्रेय नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

सत्यात्मा आत्मा सत्य और
यह सत्य मात्र है पूर्ण शुद्धि
रहती समस्त व्यवहारों में
पावन प्रबुद्ध - भावना - बुद्धि ।

[४५]

मधु सा प्रिय गिरि सा अडिग सत्य
सत्य ही लोक में सार तत्त्व
इस रूप सत्य - सम्पन्न रहे
हत हो न जीव के प्रति ममत्त्व ।

[४६]

आस्तेय नहीं केवल अचौर्य
आस्तेय एक अविकल संयम
विक्षुब्ध सिन्धु की लहरों को
जैसे वेला का धैर्य अलम् ।

[४७]

आस्तेय व्यक्ति के सुचारित्र
की गरिमा का माणिक अमोल
पर सुख, पर सुविधा, पर समृद्धि
पर-वस्तु, सिद्धि से जो अडोल ।

[४८]

आस्तेय लोभ छल ईर्ष्या का
व्यवहारों से कर निराकरण
देता समाज में समता को
विश्वासों के निर्बाध चरण ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४९]

जो वस्तु, वस्तु का अधिकारी
स्वयमेव समझता नहीं देय
उसके प्रति कोई लिप्सा या
अधिकार - यत्न है अनास्तेय।

[५०]

आस्तेय मूलतः करता है
जीवन पवित्र, प्रतिबुद्ध हृदय
निज या पर का द्विविधा - मूलक
रखता कोई भी भाव न भय।

[५१]

आस्तेय नहीं तो कुछ भी हो
होता निर्मल व्यक्तित्व नहीं
प्रतिपालित पर स्वामित्व न तो
खिलता अपना स्वामित्व नहीं।

[५२]

नारी का अपराजेय रूप
वय, यौवन-धन, सौन्दर्य - योग
इन्द्रिय सुख की उद्दाम तृषा,
पुरुषत्व प्रबल, अधिकाम भोग।

[५३]

औरों की क्या प्रतिबुद्ध पुरुष
घेरे उसको इतने अनर्थ
पर ब्रह्मचर्य के भूभृत को
यह अखिल प्रभंजन वेग-व्यर्थ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

कामानुषंग का परित्याग
नारी संसर्गों से विरक्ति
है ब्रह्मचर्य, मन या मनोज
वश में रखने की एक शक्ति।

[५५]

है ब्रह्मचर्य आचरण, श्रेष्ठ—
आचरणों में आचरण एक
सौन्दर्य प्रकृति नारीत्व रूप
सबके प्रति श्रद्धा का विवेक।

[५६]

नव, मांसलता, माधुर्य वर्ण
माया से चिर अविकारी है
ऐसी प्रतीति से अनुरंजित—
आत्मा का अडिग पुजारी है।

[५७]

निर्दोष निरापद ब्रह्मचर्य,
है ब्रह्मचर्य संश्लाघ्य धर्म
जो इससे विलग भटकता वह
परिभ्रष्ट सुपथ, सन्नष्ट कर्म।

[५८]

जो आज अभीष्ट नहीं उसका
कल के निमित संचय करना
वर्जित करता है अपरिग्रह
वैभव पदार्थ से घर भरना।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

भव-विभव-सरोवर में तटस्थ
सरसिज समान संतरण करे
जीवन-रक्षा-हित जो नितान्त
आवश्यक उतना ग्रहण करे।

[६०]

अपरिग्रह का यह अर्थ नहीं
जन-दृष्टि अनागत पर न रहे
उत्सव, दुर्दिन, दुर्भिक्षों मे
असमर्थ, व्यक्ति अनुताप सहे।

[६१]

सामाजिक कृत्यों के निमित्त
संचय, कोई आपत्ति नहीं
संचय का यदि यह मन हो तो
संचय निज की सम्पत्ति नहीं।

[६२]

अपरिग्रह वह जिसमें जन को
निज ऐश्वर्यों का चाव न हो
अपरिग्रह वह, प्रतिवेशी क्या
परदेशी त्रस्त - अभाव न हो।

[६३]

अपरिग्रह से निर्धन, समर्थ
समकक्षा में आ सकते हैं
जीवन - यापन के सर्वमान्य
साधन निश्चय पा सकते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

स्वच्छन्द परिग्रह है भौतिक
ऐश्वर्यों की दुःसाध्य पकड़
हो जाते हैं जिसमें समस्त
मानव - मूल्यों के आग्रह जड़ ।

[६५]

है सामाजिक वैषम्य यही
है यही क्रान्ति का अग्रदूत
हो कहीं अभावों की पीड़ा
हो कहीं व्यर्थ संचित प्रभूत ।

[६६]

सम्पूर्ण कर्म - चिन्तन - गति में
यह पंच व्रती जीवन - विधान
था संघ - व्यवस्था के निमित्त
आचार - संहिता के समान ।

[६७]

आचरण - विकासों में नव नव
आयाम उभरते जाते हैं
इनकी मर्यादाओं के भी
विस्तार निखरते जाते हैं ।

[६८]

कोई गृहस्थ अथवा श्रावक
अविकल व्रत पाल नहीं सकता
सम्पूर्ण अहिंसा को अपने
जीवन में ढाल नहीं सकता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

दैनिक चर्या में कितने ही
ऐसे प्रसंग आ जाते हैं
जब व्यक्ति व्रतों की रक्षा में
असमर्थ स्वयं को पाते हैं।

[७०]

गति, अशन, स्नान, उद्योगों में
कुछ ऐसा हो ही जाता है
अनजाने ही जो निर्विवाद
हिंसा—श्रेणी में आता है।

[७१]

इस हेतु व्रतों के दो स्वरूप
अणु और महा, विधि-साध्य हुये
सम्बद्ध अणुव्रत से गृहस्थ
सन्यस्त महाव्रत—बाध्य हुये।

[७२]

सम्पूर्ण दृष्टि इस नियमन ने
दिग्भ्रान्त पथिक को पहचाना
सामाजिक - जीवन का दृढ़ तर—
आधार, अणुव्रत को माना।

[७३]

थे पंच अणुव्रत सरलीकृत
सम्पूर्ण गृहस्थों के निमित्त
जिनका पालन वे सभी करें
अविल स्वभाव से स्वस्थ-चित्त।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

आणुव्रत धर्म - व्यवस्था से
सामाजिक जीवन का विकास
आगया व्यक्ति के जीवन की
दैनिक गतिविधि के बहुत पास ।

[७५]

प्रत्येक व्यक्ति था बद्ध कि वह
निज सामाजिक व्यवहारों में
आदान, प्रदान, मनन, चिन्तन
व्यवसायों में व्यापारों में ।

[७६]

अविराम अणुव्रत - अनुशासित
रक्खे अपना प्रत्येक कर्म,
वह रहे आत्मवत सबके प्रति
यह ही था उसका परम धर्म ।

[७७]

जो आणु अहिंसा का पालक
वह दे न किसी को कभी कष्ट
सेवक, परिजन, पशु पक्षी तक
आश्रित की गरिमा हो न नष्ट ।

[७८]

वह अशन वसन रक्षा रंजन—
दायित्व सुरुचि से करे वहन
असमर्थों मूकों पर न करे
निर्दय पशुता का अनुशासन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

सत्याणुव्रत का अनुयायी
मिथ्याचारों से दूर रहे
वह किसी भेद का ज्ञाता हो
ईर्ष्या-वश अन्यों से न कहे।

[८०]

वह किसी वस्तु की रक्षा का
दायित्व कभी यदि ग्रहण करे
तो उसे स्वयं समयानुसार
उसके स्वामी की शरण करे।

[८१]

वह दुखो और असहायों की
निज सत्ता पर प्रभविष्णु न हो
याच्यां न करे लिप्सा न करे
औरों के प्रति असहिष्णु न हो।

[८२]

आस्तेय अणुव्रत का पालक
लेता न उचित से अधिक मोल
कोई भी क्रेता हो सहेतु—
करता न वस्तु की हीन तोल।

[८३]

वह अप्रेरित वह अप्रेरक
वह अपहृत-निधि क्रेता न कभी
संकट के पल अति मूल्यों से
द्रव्यों का विक्रेता न कभी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

अपमिश्रण से अविराम विरत
वह पथिक राजरथ्याओं का
सर्वदा अशंकित निर्वाहक
शासनकृत मर्यादाओं का ।

[८५]

परनारी का संभोग संग
वर्जित करता है ब्रह्मचर्य
चेष्टाकृत-रति, कामाभिवेश
अनवधि अनंग-अभिनय अवर्य ।

[८६]

जो श्रावक उनका ब्रह्मचर्य
निर्लक्ष्य विजनपथ-रेख नहीं
अतिचारों अव्यवहारों का
आसक्ति-लिप्त आलेख नहीं ।

[८७]

अपरिग्रह का पालक गृहस्थ
उपयोग्य वस्तु का निश्चय कर
रहता है उसकी सीमा में
सन्तुष्ट, व्यवस्थित और सुभर ।

[८८]

संचय की चाह नहीं हागी
निस्सीमन होंगीं इच्छायें
अवरुद्ध नहीं कर पायेंगीं
सामाजिक सिद्धि, विषमतायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

औरों को रहने का सुख दे
सुख से रहने की अभिलाषा
अपरिग्रह का है भाव यही
अपरिग्रह की यह परिभाषा।

[९०]

अपरिग्रह ही करने देता
उपलब्धि-सुखों का समवितरण
वैयक्तिक सीमा से असीम
बनता सामाजिक सदाचरण।

[९१]

इस चिन्तन ने उन्मुक्त किया
सबके विकास का एक द्वार
सर्वोच्च प्रतिष्ठा पर लाया
जन-मंगल को 'मंगल-विहार'।

[९२]

इन अणुव्रतों के साथ-साथ
बढ़ते विकास के मौन चरण
'शिक्षा' एवं 'गुण' संज्ञा के
करते हैं दो व्रत और ग्रहण।

[९३]

ये सदाचार सम्बन्धी व्रत
सम्पूर्ण भेद उपभेद सहित
पालन करते करते साधक
होने लगता है आत्मस्थित।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९४]

तरु से पतझर-पल्लव समान
परिवेशों से सारे लगाव
झरने लगते हैं एक-एक
ऐहिक जीवन छल के प्रभाव।

[९५]

व्यापक निज कर्म-जगत में वह
प्रतिपल रहता है सावधान
प्रत्येक प्रवृत्ति बनाती हो
निर्दोष आत्म-मंगल-विधान ।

[९६]

फिर पंच महाव्रत ग्रहण किये
अविचल होता है अग्रोन्मुख
है एक-एक सोपान कठिन
क्रम से चढ़ना साहस का सुख ।

[९७]

सर्वोच्च शिखर तक जाने की
निश्चित क्रम-बद्ध अवस्थायें
हैं सिद्धि-विधाता साधक के
पथ की एकादश प्रतिमायें ।

[९८]

यायावर ! इन प्रतिमाओं की
यात्रा में कर निज को मनस्थ
पाक्षिक से नैष्ठिक, नैष्ठिक से
साधक होने लगता, गृहस्थ ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

सम्पूर्ण बाह्य-व्यवहारों का
उज्ज्वल जिस गति से सदाचार—
होता, होता उस गति से ही
संपृक्त आत्मगुण समाहार।

[१००]

इस गहन साधना में निमग्न
श्रावक होता जब सत्यसंध
होने लगते हैं क्षीण सकल
कर्मों के आस्रव और बंध।

[१०१]

संचित कर्मों की संसृति का
होने लगता है सहज क्षरण
जब जड़ता से हो विलग जीव
करता भव-जीवन-मुक्ति-वरण।

[१०२]

तपमय यात्रा का चिर पिपासु
पा जाये ज्यों पीयूष-अब्धि
निर्व्याज साधु जीवन की यह
शाश्वती शान्ति, परमोपलब्धि।

[१०३]

आत्मा का परमात्मा होना
सम्पूर्ण सिद्धि की क्रिया जटिल
हर अडिग चरण को मिलती है
चलते-चलते अपनी मंजिल।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

यह आत्म-रूप-उपलब्धि, शुद्ध
गुण-युक्त, साधना-सर्व-सुगम
सुव्रती साधु के तपःपूत
जीवन संयम की प्राप्ति परम—

[१०५]

एक ही जन्म में सुलभ, और
लग सकते हैं जन्मान्तर भी
जैसी विकास की प्रगति उसी
तुलना से सुकर सुदुष्कर भी।

[१०६]

रत्नत्रय जितना शीघ्र जिसे
उपलब्ध पूर्ण हो जाता है
उतना ही शीघ्र विकासोन्मुख
वह व्यक्ति परम पद पाता है।

[१०७]

अवरुद्ध प्रगति के चरण न हों
सामाजिक क्षमता हो न दीन
इस आत्मविकास अवस्था में
मानव समाज था वर्गहीन।

[१०८]

था एक धर्म, थी एक जाति
एक ही वर्ग मानवता का
जैसे युग-युग का एक प्रात
आलोक सजाये समता का।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

थे सभी एक पथ के राही
थे सभी मोक्ष के अधिकारी
प्राचीर गिरे तो लहक उठी
अंचल-अंचल की फुलवारी ।

[११०]

प्रत्येक व्यक्ति ने निज अभीष्ट
इस जीवन-दर्शन में पाया
किसको विश्राम नहीं देती
तपजयी सघन की तरु छाया ?

[१११]

शैलांग निषेधों के टूटे
चिर प्रगति-सरी निर्बाध चली
इस एक हवा के झोंके में
जन-जीवन ने करवट बदली ।

[११२]

जिनके श्वासों में भरी घुटन
अब स्वस्थ वही अधिकार हुये
नैराश्य प्रथा, प्रतिबन्धों से
बोझिल पग, अपगत-भार हुये ।

[११३]

प्रतिबन्ध न होते जन्मजात
देता न जन्म, उत्तमतायें
कृत कर्मों से ही बनती हैं
गौरवमय जीवन-गाथायें ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

है सुचारित्र ही मानवता
है सुचारित्र ही कर्म-मुक्ति
यह आस्था ही, निर्लिप्तकर्म
शाश्वत जीवन की एक युक्ति।

[११५]

लाकर सारा मानव समाज
उस समतल भू पर किया खड़ा
जिससे हर पंथ निकलता था
हर पंथ, पथिक के पाँव पड़ा।

[११६]

कैसा अछूत कैसा निर्धन
कैसा नर औ' कैसी नारी
जो सुचारित्र अर्जित कर ले
है वही मोक्ष का अधिकारी।

[११७]

जो बैठ रहे थककर उनको
जागृति-विकास की गाथा दी
वह सत्यरथी जिसने पथ को
निर्भ्रान्त सत्य की आस्था दी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्ग ८

[१]

यह मान्य कि निज सुख के निमित्त
व्यय करे व्यक्ति सारी क्षमता
जो सुखी सकल संसार करे
शोभित है उसकी मानवता।

[२]

प्रेमाश्रित, जन-सम्बन्ध सभी
व्यवहार-मधुरता, प्रेम-मूल
है सुचारित्र की गरिमा का
निःस्वार्थ प्रेम ही शीशफूल।

[३]

यदि नहीं त्याग से विलसित तो
खिलता कोई भी प्रेम नहीं
क्या मूल्य सुमन का अंतस में
जिसके सौरभ का हेम नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

ये प्रेम त्याग ही युग-युग की
मानवता का शृंगार रहे
जो बँध न सके सीमाओं में
बाँधे उनका व्यवहार रहे।

[५]

युग पुरुष अनागत-पृष्ठों पर
रहता सद्वाक्य समान अमर
होते न तिरोहित जिसकी नव—
अज्ञात प्रेरणाओं के स्वर।

[६]

मानवता का वह मधु वसन्त
कर जाता रम्य ललाम धरा
जिसके शाश्वत छायांचल में
रहता जीवन का दृश्य हरा।

[७]

भरते प्राणों में बोध विनय
देते अधरों को मुक्ति-गान
आये अपने युग-मानस को
आन्दोलित करते वर्द्धमान।

[८]

धर्मान्ध व्यवस्थायें करतीं
डूबते युगों का त्राण नहीं
सामाजिक जड़तायें तोड़े—
बिन, होता जन-कल्याण नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९]

भारत के कोने कोने में
युग-मानव का स्वर, समधिकार
पहुँचा असहायों का सुमित्र
दीनों का प्रभु 'मंगल-विहार'।

[१०]

दलितों उपेक्षितों को देते
सुखमय जीवन का नवोत्कर्ष
भारत वसुधा पर बरसाये
देशना सुमन उन्तीस वर्ष।

[११]

जन जन का मन आमोदित था
चलती मधु की सर्वत्र बात
हँसते मुस्काते लगते थे
जीवन-पथ के संध्या प्रभात।

[१२]

क्या युग की अर्थ व्यवस्था को
कोई नूतन सन्देश मिला
अथवा अभाव की धरती पर
कोई आकाश-प्रसून खिला?

[१३]

क्या सभी व्यक्ति सम्पन्न हुये
क्या सिद्धि सभी के हाथ लगी
क्या अकस्मात हो गई नष्ट
व्यवहार-विषमता की उरगी?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

हाँ, यह जो कुछ सब हुआ, हुआ
सर्वोपरि तो यह बात हुई
पाषाणों को कर दिया द्रवित
ऐसे रस की बरसात हुई।

[१५]

जीवन का मूल्य बढ़ा समता—
संव्याप्त हुई विश्वासों में।
थी पर दुख सुख-निश्वास-गंध
अपने अपने निश्वासों में।

[१६]

फिर एक दिवस इस रूप ढला
सन्तोषों में विश्वास ढले
सो गये खड़े युग अनाचार
निष्पन्न सत्य की छांह तले।

[१७]

समशील सभी, सब थे समान
था एक रूप धन सदाचार
सागर में जैसे डूब गया
कुटिलांग तटिनियों का प्रसार।

[१८]

तब वर्द्धमान से उनके दृढ़
संकल्पों ने कुछ बात कही
तप संघर्षों के यात्री ने
अविचल प्रतीति की छांह गही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६]

"अब चलो, तुम्हारी यात्रा का
पूर्ण प्रकाम कर्त्तव्य हुआ
चढ़ शीश समय की सत्ता के
अन्ततः सुफल मन्तव्य हुआ।

[२०]

दे चुके काल को गौरव तुम
कर चुके धरा को यशोधाम
इतिहास स्वर्ण के शब्दों में
कर चुका तुम्हारा अमर नाम।

[२१]

जिस अंचल ने अनुगूंज सुनी—
वाणी की, वह बन तीर्थ गया
भारत की गौरव-गाथा में
तुमने जोड़ा, अध्याय नया।

[२२]

अवशेष रहा केवल करना
परमात्म रूप की प्राप्ति तुम्हें
सत्यज्ञ ! और अब छू न सके
आगे अजीव की व्याप्ति तुम्हें।

[२३]

अब आ पहुँचा है वर्द्धमान
वह अवसर भी निर्द्वन्द निकट
धीरे धीरे हो गया पूर्ण
इह लोक आयु का कंचन घट।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

आते जाते पल पलक, समय—
अगणित नयनों से रहा देख
थी वर्द्धमान की आत्मा को
परिधिस्थ किये आलोक-रेख।

[२५]

मन में गौरव दृग-कोरों में
अभिराम तृप्ति की ज्योति जगी
सारी वसुधा उन को जैसे
सन्मानवता का स्वर्ग लगी।

[२६]

अनुभूति सजाये थी विचित्र
संव्याप्त मौन में निस्पृहता
उस वेला के चिन्तन में था
क्या क्या यह कोई तो कहता।

[२७]

तिरते तिरते रोदसी-सिन्धु
विश्लथ डूबी ही दोपहरी
उतरीं दिग्वधुओं के मुख पर
तम-अवगुण्ठनिकायें गहरी।

[२८]

तरुओं पर चढ़ती संध्या की
लाली ललाम सिन्दूर पिये
मुस्काई तो रख दिये हाथ
पल्लव पल्लव के स्वर्ण दिये।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६]

उड़ गया प्रात होते ही जो
कितनी ममता कितनी माया
थे नीड़् प्रतीक्षा में जिसकी
हर विहग लौट कर वह आया।

[३०]

थी कहीं श्याम ताम्राभ कहीं
अद्भुत द्युति थी पावानगरी
दिवसान्त निशागम रहे छोड़
अपनी अपनी आभा गहरी।

[३१]

आसन्न तिमिर पर दृष्टि किये,
लगते थे उपनगरीय ग्राम
बैठे निराश हों निकट दूर
वंचना-त्रस्त, सौजन्य-धाम।

[३२]

कासारों में खिल गये कुमुद
कूलों पर तम के वलय पड़े
ज्यों यत्र तत्र तम पर उतरे
आकाश-अंश, नक्षत्र जड़े।

[३३]

चढ़ती जाती थी शनैः शनैः
असिताभ धूल सी क्षितिजों पर
तरु त्वचा-छिद्र आवासों में
हो जाते थे मंजीर मुखर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३४]

अविराम दिवस व्यापारों की
गतियाँ सकाम हो गईं शिथिल
रजनीगंधाओं की गलियाँ
सौरभ-मदिरा से थीं पंकिल।

[३५]

उड़ती किरणों पर उठी दृष्टि
रह गई स्वयं से स्वयं ठगी
वह शान्त शारदीया संध्या
तम से लिपटी कुछ शीत लगी।

[३६]

हो गये शरद घन धवल विरल
खुलता खुलता सा गगन देश
नीलिमा-सिन्धु में डूब रहे
पावस के वे ध्वंसावशेष।

[३७]

फूले फूले कुश कासों के
हिम पर भी तम का रंग चढ़ा
मन्थर मन्थर बहती सरि का
दूरागत कलकल और बढ़ा।

[३८]

सुनती थी मौन धरा जिसके
तन्मय, नभ-पथ पर चरण चाप
उड़ता था विपिन-निकुंजों में
पल्लव-मृदु-मारुत समालाप।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[३९]

तम शीत, शीत तम दोनों ही
अन्योन्य-सिद्धि के साधक थे
कार्तिकी प्रभा के यौवन पर
चढ़ती श्री के आराधक थे।

[४०]

पावा नगरी का नृपोद्यान—
उद्यान-महामणि-मण्डप में
योगस्थ व्यक्ति की भाँति मौन
निश्चेष्ट यथा लय हों तप में।

[४१]

दो दिवस रहे रत वर्द्धमान
चिर इष्ट परमपद की गति में
कर दिया जिसे अर्पित जीवन
उस स्वप्न-सिद्धि की संसृति में।

[४२]

थे जहाँ सभी गणराज प्रमुख—
अष्टादश, काशी कोसल के
सश्रद्ध उपस्थित हस्तिपाल
मल्लाधिप उस भू-अंचल के।

[४३]

मित्रों, भक्तों की शिष्यों की
समवेत खड़ी थी एक भीड़
सन्नद्ध हुआ था उड़ने को
कंचन-विहंग, परित्यक्त नीड़।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४४]

पल एक, योग-भू से अविरल
गगनांगन पर आलोक चढ़ा
रवि शशि अनन्त आलोकों का
आलोक-पुंज हो सघन बढ़ा।

[४५]

उनका पार्थिव विशेष भू से
ले गया उठा आलोक-यान
अथवा अदृश्य हो गये सतनु
चल स्वप्न दृश्य से वर्द्धमान।

[४६]

देखते रहे उड़ते प्रसून,
दर्शक, विस्मय-विह्वलता से
उद्यान-अंक में था अपूर्व
मणि-शयन दीप्त निर्मलता से।

[४७]

मुक्ता-मण्डित कर दिया गगन
हो उदित सघन ताराओं ने
छायापथ पर आलोक सुमन
फेंके सम्पूर्ण दिशाओं ने।

[४८]

यह लगा अमा अवगुण्ठन से
पल पल थी लाज बखेर रही
अनिमेष, महापथ पर जाते
युग-योद्धा का पथ हेर रही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४६]

निर्वाणोत्सव के सहज भाव
मानस मानस में आ बैठे
वसुधा के दीपक, अम्बर के
हीरों से होड़ लगा बैठे।

[५०]

गृह गृह में उत्सव की बेला
उतरी गृह गृह में दीवाली
धुल गईं चाँदनी में मानो
घन तम की दीवारें काली।

[५१]

प्रमदायें दीप जलाती थीं
ले ले जातीं नव-बालायें
दीपों की प्रस्थापन भू का
इंगित करतीं थीं वृद्धायें।

[५२]

मणिदीप, सहस्रों स्वर्णदीप
थे दीप मृत्तिका के अगणित
छोड़ते ज्योति-रेखाओं से
कुछ विविध वर्ण से पुजांकित।

[५३]

गलियों में दीप लहकते थे
थे राजपथों पर उगे दीप
खेलते दृष्टियों से दीपक
कुछ कुछ सुदूर कुछ कुछ समीप।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

छत छज्जों द्वार गवाक्षों पर
लहराती दीपशिखायें थीं
उद्यान निकुंजों में छिप छिप
मुस्काती दीपशिखायें थीं।

[५५]

सरसी में दीप तरंगों पर
तरु शीशों पर थी दीप ज्वाल
दीपों को लेकर मचल रहे—
थे, सरिताओं के तट अराल।

[५६]

नक्षत्रों की झिलमिल से मिल
हो गया भिन्नता-भाव व्यर्थ
दीपों का बोध कराने में
पवनान्दोलन ही था समर्थ।

[५७]

अँगड़ाती दीपशिखाओं के
रह गये शिथिल हिलते तन मन
भू-स्रस्त निशा का उत्तरीय
ले गया उड़ा आलोक पवन।

[५८]

तारा दीपों से बहुत अधिक
छिद्रांकित था जिसका प्रसार
विपिनों में तरु शाखाओं में
उलझा उलझा था अंधकार।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५९]

आलोक सुवर्णों में अंकित
थे यत्र तत्र कुछ तत्व-कथन
अमिताभ प्रथम लिपिबद्ध किया
दीपों ने 'सन्मति' का चिन्तन ।

[६०]

कर गये बस्तियों से बाहर
विजनों में भी कुछ जन प्रकाश
जीवन से देखा ही न गया
सूनेपन का जीवन हताश ।

[६१]

कुछ बाल समूहों के साथी
तन के दुर्बल मन के समृद्ध
करते थे बहुविध ज्योति खेल
उल्लास पुंज में बँधे वृद्ध ।

[६२]

थे कहीं धर्म प्रवचन होते
थी कहीं गूँजते कीर्तिगीत
वाणी वाणी पर उतर रहा
था, वर्द्धमान का गुरु अतीत ।

[६३]

चिन्तन पर वार्तायें होतीं
तप का उल्लेख किया जाता
विद्वत्परिषद भी प्रतिपादित
सत्यों की थाह नहीं पाता ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

पर इस उत्सव के अंतस में
ठहरी ठहरी करुणा अथाह
देख ही रही थी किसी भाँति
उल्लास तरंगों का प्रवाह ।

[६५]

जाने वाले की किसी रूप
होती कोई संपूर्ति नहीं
जो मूर्ति दृष्टि से हट जाती
बनती फिर वैसी मूर्ति नहीं ।

[६६]

रह सका नहीं वह दृष्टिरूप—
सम्बन्ध, जिसे मन से जोड़ा
यह बात अलग, साम्राज्य बड़ा
यश गान मान गुण का छोड़ा ।

[६७]

कैसा निर्वाण प्रतीत हुआ
जलती दीवाली से पूछो
शैशव जिस अंचल में खेला
पूछो, वैशाली से पूछो ।

[६८]

दीपों से स्नेह छलकता था
नयनों के तट भर जाते थे
तम-मौन मिटाती, बातों के
अधरों पर गीत न आते थे ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६९]

निर्वाणोत्सव का हुआ अन्त
पर एक महायुग ठहर गया
चल रही अंक में लिये जिसे
यह जीर्णधरा सागरवलया।

[७०]

प्रति वर्ष मनाई जाती हैं
उत्साहपूर्ण दीपावलियाँ
प्रति वर्ष डाल से झरते हैं
लहलहे सुमन, मुकुलित कलियाँ।

[७१]

यायावर ! जीवन कैसा है
किस रूप नियन्त्रित है समाज
तुम स्वयं भ्रमणकर देख चुके
उल्लासों के घर छिपी लाज।

[७२]

आतंकों का घन अंधकार
असुरक्षा की चल जिह्वायें
निगले जाते हैं एक एक
भयभीत आयु, नव प्रतिभायें।

[७३]

कुछ आदर्शों की ममता ले
जीता जो भय से जीता है
राकाओं का रस सूख गया
दिवसों का अंचल रीता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

आदर्श पुकारें डूब रहों
जीवन—वन में आदर्शों की
चल आई इतनी दूर कथा
उज्जवल मानव उत्कर्षों की ।

[७५]

भारत-भू ने मानवता को
शाश्वत-जीवन आदर्श दिये
भारत-भू के ही महापुरुष
कर्मायु कल्प कल्पान्त जिये ।

[७६]

वैयक्तिक आधारों पर फिर
होता है व्यक्ति-विरोध यहाँ
वैयक्तिक मानो के वश जन
लेता जन से प्रतिशोध यहाँ ।

[७७]

वैयक्तिक लाभों के निमित्त
हिंसा पर व्यक्ति उतरता है
छल बल से मिथ्याचारों से
जैसा मन हो, वह करता है ।

[७८]

निज हित न बने, यह चिन्त्य नहीं
पर हानि अन्य की हो जाये
बहुतों के जीवन का यह ही—
उद्देश्य, न कोई सुख पाये ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७९]

उद्देश्य हीन है व्यक्ति आज
वह षड्यन्त्रों का दोषी है
जो सुपथ बनाते हैं उनकी
गरिमा के प्रति आक्रोशी है।

[८०]

सूखे सर ज्वाला-झंझायें
ठहरी ठहरी बरसातें हैं
फिर भी ऐश्वर्यों के मन में
वे ही पूनम की रातें हैं।

[८१]

सद्भाव-स्नेह सूत्रों से निज
व्यवहार-विधा जिसने बाँधी
प्रत्येक दिशा से उठती है
उस जीवन पर तम की आँधी।

[८२]

हिंसा अन्याय विषमता से
निज पर से मानव सृष्टि त्रस्त
मिटता जाता है युग युग की
संस्कृतियों का वैभव समस्त।

[८३]

उद्दाम धधकती हृदयों में
भौतिक लाभों की लिप्सायें
असहाय भटकती हैं मानो
अपसृत आदर्श-प्रतिष्ठायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८४]

क्यों युद्ध भीषिका से युग का
मानव हो पाता मुक्त नहीं
क्यों भौतिकता की विपुल देन
होने पाती अतिभुक्त नहीं।

[८५]

प्रत्येक प्रश्न संघर्ष व्यथा
उत्पीड़न है संविग्रह है
सारे ज्वलन्त इन प्रश्नों का
उत्तर केवल अपरिग्रह है।

[८६]

धन धाम धरा सुख द्रव्यों की
क्यों व्यक्ति करे इच्छा अतिशय
अधिकार, किसी की ईर्ष्या या—
अवहेला का क्यों बने विषय ?

[८७]

पच्चीस शतक पहले समझा
मानव के सुख दुख का लेखा
आलोक किरण ने हो जैसे
तम के अभ्यन्तर को देखा।

[८८]

अपरिग्रह और अहिंसा के
थे प्रथम विचारक वर्द्धमान
है आज पूर्व से कहीं अधिक
उनका चिन्तन व्यवहार्य ज्ञान।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८९]

अपरिग्रह से ही संभव है
निश्चिन्त, सुखी निश्छल समाज
उनकी सम्पूर्ण अहिंसा हो
कर सकती मानव त्राण आज।

[९०]

की वर्द्धमान की यह शिक्षा
सादर शिरस्थ गांधी ने भी
सामर्थ्य अहिंसा की देखी
शस्त्रास्त्रों की आँधी ने भी।

[९१]

इस महामन्त्र से सिद्ध किये
बन्दी मानव ने मुक्ति गान
भारत की वसुधा ने पाया
अपनी सत्ता का युग महान्।

[९२]

जो असंग्रही उसके समक्ष
झुक राज विभव सम्राट गये
चरणों पर गिर श्रद्धाभिभूत
कितने सम्भ्रान्त ललाट गये।

[९३]

यदि कोई भी उपलब्धि सदा
एक ही व्यक्ति के साथ रहे
तो क्यों न कभी इस अनुभव को
जन सामाजिक अन्याय कहे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६४]

जन कर्म करे सुख सुविधा का
वितरण-दायित्व, व्यवस्था ले
ऐसा समाज है सर्व लाभ
जो लोक-लाभ की चिन्ता ले।

[६५]

है वर्द्धमान की शिक्षा के—
यह युग, यद्यपि अत्यन्त निकट
उन्मुक्त अधिक हैं पहले से
आलोक-हेतु अन्तर के पट।

[६६]

धर्माडम्बर पशुमेधों का
मानव सम्मान नहीं करता
वह किसी अबूझे ईश्वर की
सत्ता से आज नहीं डरता।

[६७]

अब दृष्टिकोण वैज्ञानिक है
रूढ़ियाँ नहीं व्यवहारों में
मिटते जाते हैं भेद-भाव
समतायें सजग विचारों में।

[६८]

अब राजनीति शासन का मन
जन के प्रति है अतिशय उदार
है अप्रभाव, अविवेक, अनय
अब वर्ण व्यवस्था का प्रहार।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९९]

व्यापार-बुद्धि है विप्र और
क्षत्रिय विद्यागुरु त्यक्त-पत्र
अब नहीं वर्ण वंशानुक्रम—
प्रतिबन्ध, मानता राजछत्र ।

[१००]

फिर भी अनीति के शोषण के—
शर, परिवेशों में तिरते हैं
जीवन के मधुर प्रभातों पर
कुछ काले बादल घिरते हैं ।

[१०१]

हो एक सभी का मिलन-मंच
जन-वर्ग न हो जन-भेद न हो
जीवन का स्तर वह तृप्ति वरे
पलमात्र किसी को खेद न हो ।

[१०२]

ऐसे ही जीवन का प्रभात
स्वप्नों में लखते वर्द्धमान
तपलीन रहे जन जीवन का
संभाव्य परखते वर्द्धमान ।

[१०३]

ऐसे धर्मों व्यवहारों का
दे गये धरा को महामंत्र
जन रहे जिसे शीर्षस्थ किये
रख दिया भूमि पर राजछत्र ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०४]

बिखरे अतीत की ओर आज
जाग्रत युगबोध निहार रहा
अब वर्द्धमान को चरण चरण
टूटा संसार पुकार रहा।

[१०५]

तुमने पीड़ित मानवता को
भर लिया अंक में अनायास
औचित्य-श्रवण के, स्वीकृति के
ले आये हमको बहुत पास।

[१०६]

तुमने जीवन को संगति दी
सन्तुलित और संघर्ष हीन
रक्खा न तुम्हारे चिन्तन ने
कोई अछूत असहाय दीन।

[१०७]

समता के स्वर में श्रद्धा के—
निःस्वार्थ प्रेम के अमर गीत
दो वर्द्धमान ! इस युग को निज
अभिराम अनाग्रह का अतीत।

[१०८]

पी गये महाशिव ! तुम युग की
पीड़ा का विष, व्यवहार-दम्भ
दो दिशाबोध, भटके पथ को
हे विमल-शान्ति-चन्द्रिका-स्तंभ !

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०९]

तुमने साहस से ध्वस्त किया
युग का असहिष्णु अगढ़ दर्शन
तुम आत्मबोध के स्वर्गदूत,
उतरो जन मन भू पर निस्वन ।

[११०]

उतरो ऐश्वर्यों के गृह में
अदत्त ग्रहणों की अस्वीकृति,
तिर रही शून्यता पर तुम हे !
उतरो सद्भावों की संसृति ।

[१११]

जागो तम-दीन निशीथों के
मंगल-विहान हे ! प्रभावन्त
उतरो मन के उद्यानों में
मुरझाई कलियों के वसन्त ।

[११२]

पीड़ित जनजीवन की अनन्त
आकांक्षाओं के स्वर जागो
जिसकी संध्या अनुराग मयी
उस दिन के प्रथम प्रहर जागो ।

[११३]

तुम एक विजन के निर्झर से
समरस, निश्च्छल निर्भय विचरो
सोई वसुधा के श्रवणों में
उज्ज्वल जीवन-संगीत भरो ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

हे महा पुरुष ! इस पथ-भ्रष्ट
युग के दिग्भ्रम को निष्कृति दो
प्रत्येक प्रगति गन्तव्य गहे
ऐसा साहस ऐसी धृति दो।

[११५]

अमृत जलधर ! मानव-भू पर
हिम-मृदुल फुहारों से बरसो
नव आशाओं के इन्द्र धनुष !
मधु चित्र उभारों से सरसो।

[११६]

तुम सकल जीव, जीवन पथ के
अविराम तिमिरहर अपर भानु
हे सत्यरथी ! निर्मल विवेक
अज्ञान - द्वेष - धन - वन - कृसानु।

[११७]

यायावर ! सुन यह विमल वृत्त
वैशाली में ठहरा ठहरा
रह गया विसुध करुणाग्रहीत
चढ़ गई शीश पर पुण्य धरा।

[११८]

बोला, "मैं वह दिग्भ्रान्त पथिक
देखा न सहज ठहराव कहीं
ले जा पायेगा और अधिक
अब नहीं मुझे भटकाव कहीं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११९]

ठहरे तो पांव यहाँ ठहरे
टूटी तो टूटी भ्रान्ति यहाँ
मेरे प्रेरक ! यह अनघ भूमि
मिलती है शाश्वत शान्ति यहाँ ।

[१२०]

तुम मुझे इष्ट पर ले आये
सागर को करो समर्पित रथ
सुख ही सुख है संव्याप्त सूक्ष्म
चैतन्य-गम्य, अनवद्य अकथ ।

[१२१]

तुम अखिल कर्म-सौन्दर्य सघन
प्रेरणा पुंज के मधु-समीर
'मधु बिन्दु' मोह-धृत प्राणों को
देते सुबोध संकल्प धीर ।

[१२२]

प्रेरक कितनी ही बार विजन
यात्रा में आये पथ टूटे
भय भेद प्रलोभन झंझायें
किसके न सुदृढ़ संयम छूटे ।

[१२३]

मैं स्थिर हूँ अब भू-नभ संगम
छूती है मेरी मुक्त दृष्टि
मैं एक अमिट सत्ता मुझ से
अपसृत है तिमिरावरण सृष्टि ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

तुमने मुझको मर्यादा दी
देती वैशाली आत्म-बोध
सूने अनन्त में डूब रहे
आसंगों के सारे विरोध ।

[१२५]

हो गये एक अब अपरिमेय
मैं तुम से मिल तुम मुझ से मिल
यह अनुभव, अमृत धुला लोक
हट गई दूर वसुधा पंकिल ।"

[१२६]

जिज्ञासा रथ, यात्रा प्रयत्न
बाधा विलम्ब भय भ्रम वाली
मन यायावर, प्रेरक विवेक
साधना-सिद्ध-भू वैशाली ।

[१२७]

अर्जन त्रिरत्न समरसी भाव,
सुख शान्ति सम्पदा, वर्द्धमान—
शत शत शरणों के चिरशरण्य
निश्चय-भवरुज भेषज निदान ।

डॉ० राम स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट—
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्टांश

कुछ ज्ञातव्य सन्दर्भ

१. **आमली**—बालकों का एक खेल है जिसमें कतिपय बालक दौड़कर वृक्ष पर चढ़ते हैं और एक अन्य बालक उनमें से किसी को छूने का प्रयत्न करता है।

तिन्दूशक—यह भी बालकों का एक खेल है। इस खेल में भी दो बालक साथ-साथ निर्दिष्ट वृक्ष की ओर दौड़ते हैं। जो बालक वृक्ष को प्रथम छू लेता है वह विजयी होता है। विजयी बालक अपने पराजित साथी की पीठ पर चढ़ कर मूल स्थान तक आता है।

२. **संगम देव**—इन्द्र की सभा के एक देव संगम देव ने इन्द्र द्वारा कथित वर्द्धमान की प्रशंसा पर विश्वास न कर के दो बार वर्द्धमान की परीक्षा ली। प्रथम बार आमली क्रीड़ा में वह भयंकर सर्प बनकर प्रकट हुआ और दूसरी बार तिन्दूशक खेल में वह बाल-वेश धारण कर उनके खेल में सम्मिलित हुआ। दोनों ही बार वर्द्धमान ने उसके मायावी रूप का तिरस्कार कर अपने धैर्य और शक्ति का परिचय दिया। अन्त में पराजित संगमदेव को इन्द्र के कथन पर विश्वास करना पड़ा।

३. **यक्ष**—एक बार पद-यात्रा करते हुए वर्द्धमान यक्ष ग्राम गये और वहाँ एकान्त चिन्तन के निमित्त एक यक्षायतन में ठहरे। रात्रि के समय एक यक्ष उनके सम्मुख आया और उन्हें रात भर दारुण पीड़ा देता रहा परन्तु वर्द्धमान को अविचलित पाकर आत्मग्लानि से दुखी उनके चरणों पर गिर पड़ा तथा उनके धैर्य और सहिष्णुता की प्रशंसा की।

४. **दृष्टि-विष चण्डकौशिक**—एक बार वर्द्धमान किसी ग्राम को जा रहे थे। वे सीधे तथा कम दूरी के मार्ग से जाने लगे। ग्रामीणों ने उन्हें उस मार्ग में रहने वाले एक भयंकर विषधर की स्थिति से अवगत कराया किन्तु वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहे। मार्ग में उस सर्प ने जिसकी दृष्टि ही विष थी, वर्द्धमान पर आक्रमण किया। दृष्टि के विष का प्रभाव न देखकर उस सर्प ने वर्द्धमान के पाँव पर गहन दंशाघात किया। पाँव के व्रण से दुग्ध की धारा प्रवाहित हो चली। यह देख चण्डकौशिक नामक वह सर्प बहुत विस्मित हुआ। वर्द्धमान ने उससे कहा, "अनेक जन्मों में किये दुष्कर्मों के फलस्वरूप तो तुम्हें इस योनि में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Central ... 185396 Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
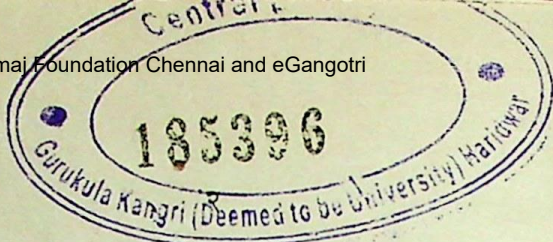
जन्म लेना पड़ा और अब जो यह विनाशलीला कर रहे हो कभी इसके परिणाम पर भी विचार किया है" ? इन शब्दों से उस चण्ड सर्प का मन बदल गया। उसने हिंसा का वह व्यापार सदा के लिए छोड़ दिया।

५. **संसार-रचना के द्रव्य**—ये द्रव्य छः हैं—जीव, अजीव (पुद्गल), धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

६. **कर्म सिद्धान्त में विवेचित तत्व**—ये तत्व सात हैं—जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा तथा मोक्ष।

७. **गुणत्रय**—प्रत्येक वस्तु में तीन गुण होते हैं—उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य। भगवान महावीर का सर्वप्रथम उपदेश शब्द "उप्पणेहवा विणस्सेइवा वाधुवेइवा"

८. **कर्मों के आठ प्रकार**—ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, गोत्र तथा अन्तराय।

९. **त्रिरत्न**—सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक् चरित्र।

१०. **वस्तु तथ्य-ज्ञान विधियाँ**—वस्तु तथ्य का ज्ञान दो प्रकार से होता है—१. प्रमाण, २. नय।

११. **नय के प्रकार**—नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ़, तथा एवंभूत।

१२. **मधुबिन्दु**—इस दृष्टान्त से सम्बन्धित एक आख्यान है। कभी एक व्यक्ति क्रुद्ध हाथी से भयभीत होकर एक वृक्ष पर चढ़ गया। हाथी ने उस वृक्ष को झकझोरा तो गिरने के भय से बचने के प्रयत्न में एक शाखा से अध:विलम्बित होकर रह गया। ऊपर एक मधु का छत्ता था। नीचे एक गम्भीर कूप और कूप में चार बड़े-बड़े विषधर थे। जिस शाखा से व्यक्ति लटका था उसे एक काला एवं श्वेत चूहा काट रहा था। यह स्थिति उस व्यक्ति ने देखी। जब व्यक्ति का मुख ऊपर होता तो छत्ते से एक मधुविन्दु उसके मुख में आ जाता था। पत्नी के आग्रह पर एक विद्याधर ने उसकी रक्षा के निमित्त उसे अपने साथ ले जाने की इच्छा व्यक्त की किन्तु मधुविन्दुओं के लोभवश वह विलम्ब करता रहा। परिणाम क्या हुआ यह स्पष्ट है। यह पूर्ण दृष्टान्त भौतिक लिप्साओं के प्रति जीव के मोह का प्रतीक है। पृथक् पृथक् स्पष्ट किया जाये तो वह व्यक्ति जीव, हाथी काल, शाखा आयु, काला चूहा, रात्रि, श्वेत चूहा दिन तथा मधुविन्दु संसार है। चार सर्प चार गतियों के प्रतीक हैं और विद्याधर गुरु है।

१३. **मंगल बिहार**—धर्म प्रवचनों की यात्राएँ ; देश-भ्रमण।

१४. **द्युतिपलाश**—वैशाली के राज-उद्यान का नाम।

१५. **नन्ध्यावर्त**—कुण्डनपुर के स्वामी राजा सिद्धार्थ के भवन का नाम।

१६. **केवलज्ञान**—त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों का युगपद ज्ञान।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar